ज्ञानामृत

मई, 1982
वर्ष 17 ❋ अंक 11
मूल्य 2.00

राजयोग ही जीवन का सर्वश्रेष्ठ सहारा है
RAJ YOGA IS THE SUPERLATIVE HELP OF LIFE

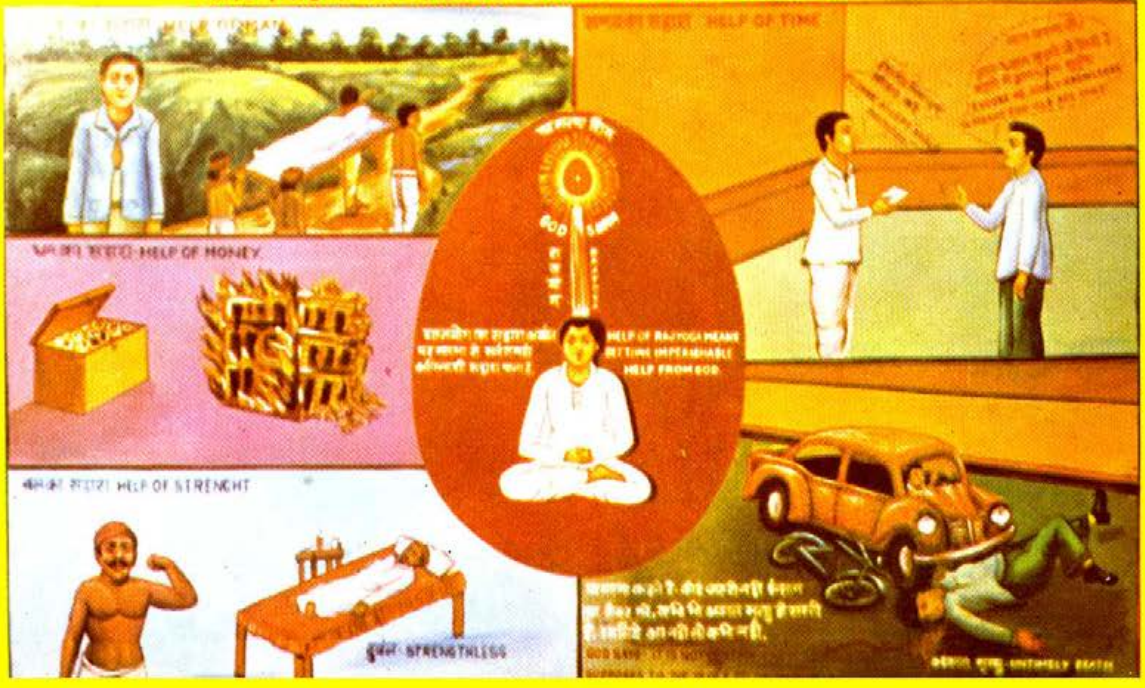

शक्ति नगर, देहली में चरित्र निर्माण आध्यात्मिक मेले का उद्घाटन कर रहे हैं उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भ्राता ए० एन० सेन जी तथा ब्र० कु० दीदी मनमोहिनी जी। ब्र० कु० चक्रधारी, दीदी मनमोहिनी जी तथा न्यायाधीश सेन जी के मध्य में हैं। ब्र० कु० गायत्री मोदी तथा ब्र० कु० सुधा दीदी जी के बायीं ओर दिखाई दे रही हैं।

रायपुर में आध्यत्मिक मेले के उद्घाटन समारोह के अवसर पर विश्वशान्ति सम्मेलन का आयोजन किया गया। मंच पर बैठी हैं (दाएं से) मुख्य प्रशासिका ब्र० कु० प्रकाशमणि जी, कृषि राज्य मन्त्री बी० आर० यादव एवं विधायक एवं महापौर भ्राता स्वरूप चन्द जैन।

नेपाल के प्रधान मन्त्री भ्राता सूर्य बहादर थापा जी को ब्र० कु० राज, श्रीकृष्ण का चित्र भेंट करते हुए। चित्र में अन्य ब्र० कु० भाई बहनें भी दिखाई दे रहे हैं। ↓

↑ काश्मीरी गेट (देहली) सेवा केन्द्र की ओर से आयोजित आध्यात्मिक मेला के उद्घाटन समारोह में मंच पर विराजमान हैं (बाएं से) बहिन गायत्री मोदी जी, बहन श्रीमति आनन्द जी, ब्र० कु० चन्द्रमणि जी, न्यायाधीश भ्राता आनन्द जी तथा ब्र० कु० धैर्यपुष्पा जी।

सचित्र समाचार

रायपुर में आध्यात्मिक मेले में ब्र० कु० किरण जी म० प्र० के भूतपूर्व मुख्य मन्त्री भ्राता श्यामाचरण शुक्ला जी को चित्रों की व्याख्या दे रही हैं।

करनूल सेवा केन्द्र द्वारा उद्योग मेले में आयोजित मण्डप का अवलोकन करते हुए आन्ध्र प्रदेश के गृहमन्त्री भ्राता शेशसेना रेड्डी जी। उनको ब्र० कु० तारा चित्रों पर समझा रही हैं।

के० जी० एफ० (K. G. F.) में राजयोग विश्वशान्ति मेले के अवसर पर सर्व धर्म सम्मेलन में इस्लाम धर्म पर बोलते हुए भ्राता सैय्यद सिराजुदीन।

भटिण्डा में अध्यात्मिक संग्रहालय का उद्घाटन भ्राता एस० एस० गेवाल द्वारा सम्पन्न हुआ। पास में ब्र० कु० कमलेश, कैलाश खड़ी हैं। ↓

जयपुर राजापार्क द्वारा श्रमिक शिक्षा केन्द्र मे आयोजित त्रिदिवसीय संगोष्ठी में ब्र० कु० पूनम भाषण करते हुए। साथ में ब्र० कु० शीला बहन बैठी हैं।

Regd. No. D(E) 70

फीरोजपुर में चरित्र निर्माण आध्यात्मिक मेले का उद्घाटन करने के पश्चात् भ्राता एन० के० अरोरा कमिश्नर फीरोजपुर संभाग, ब्र० कु० भाई बहनों के साथ परमात्मा शिव की याद में खड़े हैं

ब्र० कु० किरण बहन रायपुर मेले में मध्य प्रदेश के स्वायत्त शासन मन्त्री भ्राता कन्हैया लाल शर्मा जी को चित्रों की व्याख्या देते हुए

गोहाटी में ब्र० कु० शीला गोहाटी विश्व विद्यालय के उपकुलपति को चित्रों की व्याख्या करते हुए

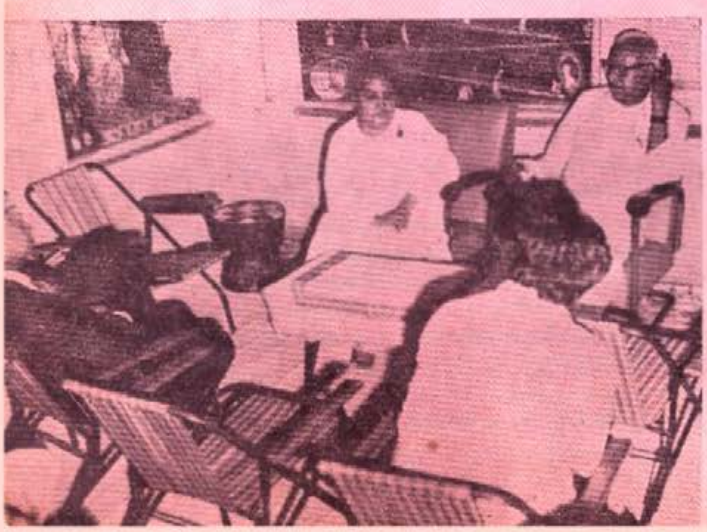

मद्रास में न्यायविद स्नेह मिलन में सम्बोधन करते हुए उच्चतम न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश भ्राता बी० आर० कृष्णा अय्यर जी। साथ में ब्र० कु० शिव कन्या बैठी हैं

वर्ष १७ अंक ११ मई १९८२ मूल्य २.००

अमृत सूची

१. राजयोग ही जीवन का सर्वश्रेष्ठ सहारा ... १
(मुख पृष्ठ के चित्र में सम्बन्धित)
२. परम पिता के पुनीत प्यार की अनुभूति (सम्पादकीय) ... २
३. आनन्द-दायनी पवित्रता ... ५
४. पद्मासन या पद्म आसन ... ८
५. सौन्दर्य की परिभाषा ... ९
६. सचित्र समाचार ... १३
७. सतयुग और मर्यादा ... १७
८. सूर्य और विष्णु ... २१
९. यहां क्या होता है ? (कविता) ... २२
१०. विश्व की मूल संस्कृतियों का मूल दैवी संस्कृति ... २३
११. कभी नहीं (कविता) ... २८
१२. एक रस अवस्था में रहने की युक्तियां ... २९
१३. जय गीता माता (गीत) ... ३१
१४. कुछ अटपटी, खटपटी और चटपटी बातें ... ३२
१५. आध्यात्मिक सेवा समाचार (सचित्र) ... ३४
१६. सेवा ... ३५
१७. 'आबू अब्बा' शब्द विश्व की सुख शान्ति का सार है ... ३९
१८. रूहानी नशा ... ४०
१९. टकराव ... ४२
२०. समस्याएं एवं निराकारण ... ४४
२१. आध्यात्मिक सेवा समाचार ... ४५

मुख पृष्ठ के चित्र से सम्बन्धित

राजयोग ही जीवन का सर्वश्रेष्ठ सहारा

राजयोग के अभ्यासी के लिए ईश्वरीय नियमों का पालन करना परमावश्यक है। राजयोगी के लिए प्रथम नियम है प्रति दिन सतसंग अर्थात् ईश्वरीय ज्ञान की शिक्षा लेना। दूसरा राजयोगी के लिए नियम है शुद्ध, सात्विक और योग युक्त हाथों द्वारा तैयार किया गया भोजन का सेवन करना। तीसरा मुख्य नियम है ब्रह्मचर्य का पालन और चौथा नियम है दैवी गुणों की धारणा। इन नियमों को धारण करने से सच्चा योगी जीवन अर्थात् कमलसम जीवन बन जाता है और राजयोगी सदा शिव, जो ही अकालमूर्त हैं, सर्व शक्तिवान हैं, मुक्ति और जीवन का वर्सा देने वाले हैं—को ही सर्वसम्बन्ध से याद करता है। वह समझता है यह समय (काल) तन, धन तथा सम्बन्धी सदा के साथी नहीं है, उस की बुद्धि अल्पकालीन, नश्वर, अस्थिर—इस लोक के पदार्थों में न टिक कर परमधाम निवासी अविनाशी पिता परमात्मा में ही टिकी रहती है। और वह इस दुनिया के सर्व सहारों को छोड़कर एक राजयोग का सहारा लेकर इस जगत में व्यवहार करता है। राजयोग ही उसका सर्वश्रेष्ठ सहारा बन जाता है।

सूचना

ज्ञानामृत का ८१-८२ वर्ष का ११ वां अंक आप के हाथों में है परन्तु आश्चर्य है कि बार-बार लिखने पर भी कुछ सेवा केन्द्रों से अभी तक पूरा शुल्क प्राप्त नहीं हुआ है। कृपया शीघ्र अति शीघ्र शेष शुल्क भेजने की कृपया करें।

व्यवस्थापक

परमपिता के पुनीत प्यार की अनुभूति

परमात्मा के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए चिरातीत से दार्शनिक लोग अनेक प्रकार के प्रमाण और तर्क प्रस्तुत करते आये हैं। परन्तु यह सौभाग्य की बात है कि हमें अब इस विषय में किसी प्रमाण या तर्क की आवश्यकता नहीं है। हमारे लिए तो परमात्मा का अस्तित्व हस्त-कंगन की न्यायीं अनुभव-सिद्ध है। परमात्मा तो अब हमारे जीवन में बस चुका है। प्रातः आँख खुलते ही हमारा पहला सम्पर्क उसी से होता है और रात को हम उससे मिलने के बाद ही सोते हैं। प्रतिदिन प्रातः जब हम 'मुरली' नाम से उसके अनमोल शब्द सुनते हैं तो उन में उसकी प्रतिभा की छाप निष्शंक रूप से हमें अनुभव होती है और अब हम अपने जीवन को स्वयं उस ही की मार्ग दर्शना से चला रहे हैं। ऐसे घनिष्ठ सम्बन्ध होने पर उसके अस्तित्व के बारे में दार्शनिक प्रमाणों की क्या आवश्यकता है? क्या हम अपने किसी स्नेही मित्र की या अपने प्रिय माता-पिता की उपस्थिति को अनुमान प्रमाण द्वारा या किसी दार्शनिक विधि से तर्क-वितर्क करके जाना करते हैं? नहीं, उनका तो हमसे तो प्रत्यक्ष सम्बन्ध हुआ करता है और उन्हीं से ही तो हमारे जीवन में चहल-पहल, लेन-देन और रेल-पेल होती है। तो जब हम यह बताते हैं कि परमात्मा, जिसे आत्मा का माता-पिता और सखा आदि माना गया है उसके साथ भी हमारे प्रत्यक्ष वैसे ही सम्बन्ध हैं, तब इसमें शंका की कौनसी बात है? अन्तर केवल इतना ही तो है कि लौकिक सम्बन्धियों का प्रत्यक्ष हमें ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा होता है और इस परमप्रिय आत्मिक सम्बन्धी का प्रत्यक्ष हमें ज्ञान द्वारा अतीन्द्रिय रीति से, मानसिक प्रत्यक्ष के रूप में होता है। केवल विधि में अन्तर होने से, हमारा कथन अविश्वसनीय क्यों?

सभी को अनुभव क्यों नहीं होता?

लोग पूछते हैं—"जो अनुभव आपको प्रत्यक्ष रूप में होता है, वह सभी को क्यों नहीं हो जाता? संसार में हम जिस व्यक्ति को देख सकते हैं और मिल सकते हैं, दूसरे भी उसे देख और मिल सकते हैं; परमात्मा के विषय में ऐसा क्यों नहीं हो सकता? परमात्मा के बारे में तो हम सुनते हैं कि वह अत्यन्त शक्तिशाली और ज्वालायमान् है; तब वह अपने प्रचंड तेज और अपनी सवेग शक्ति से सबके सम्मुख प्रगट होकर प्रत्यक्ष क्यों नहीं हो जाता? यदि वह अपनी दयालुता से ऐसा कर दे, तब तो उसके विषय में छानबीन अथवा तर्क-वितर्क की आवश्यकता नहीं रहेगी।"

जो लोग परमात्मा को इस प्रकार अनुमानित करते हुए ऐसा प्रश्न करते हैं, उन्हें सोचना चाहिए कि जापान देश के हिरोशिमा नगर में जब लघुतम एटम बम का विस्फोट हुआ था, तो उसमें से प्रगट होने वाली ज्वाला को कितने लोग देख सके थे, और उसकी शक्ति को कितने मनुष्य सहन कर सके थे? अतः प्रश्न-कर्त्ता लोगों के अपने मन्तव्य के अनुसार यदि परमात्मा की ऐसी शक्ति है कि पृथ्वी और नभ-मण्डल-स्थित ग्रह थर्रा उठेंगे और यदि उसका इतना प्रकाश है कि दसों दिशाओं में चकाचौंध हो जाएगा तो फिर हम स्वयं उन्हीं प्रश्न-कर्त्ताओं से पूछना चाहते हैं कि निर्बल और अशक्त आत्मा क्या उस अदम्य प्रत्यक्षता के सम्मुख ठहर सकेगी? क्या पतित आत्मा उस परम पुनीत पिता के सम्मुख हो सकने में समर्थ होगी? हम यह भी पूछना चाहते हैं कि क्या परमबुद्धिमान परमात्मा से हम अधिक जानते हैं कि वे अपना परिचय हमें कैसे दें?

परमात्मा माध्यम द्वारा प्रगट होते हैं।

हमें यह मालूम होना चाहिए कि परमात्मा

मनुष्यात्मा को स्नेह, सम्मान और स्वतन्त्रता के मार्ग से अपने परिचय का पात्र बनाते हैं। वे किसी बिजली की कौंध की तरह प्रचण्ड रूप से अपना साक्षात्कार कराके मनुष्यात्माओं को अपने अस्तित्व में विश्वास करने के लिए बाध्य नहीं करते। दबाव से या बाध्य करने से कल्याण नहीं होता। अतः वे उनके सम्मुख प्रगट होते हैं जो **विधि-पूर्वक** उनका प्रत्यक्ष चाहते हैं और यदि कोई उनके अस्तित्व में विश्वास नहीं करता तो परमात्मा की ओर से उन-लोगों के लिए भी स्वतन्त्रता है। वे अनुभूति अथवा प्रत्यक्ष के लिये विधि सिखाते हैं जिसे 'योग' कहा जाता है। उस सहज योग को सिखाने के लिये वे किसी मानवी माध्यम के द्वारा ही मनुष्यात्माओं के सामने प्रगट होते हैं, उन्हें अपनी नजरों से निहाल करते हैं और अपने अनमोल वचनों से मालामाल भी करते हैं तथा अपने अनुपमेय प्रेम से उन्हें सींचते भी हैं। वे मनुष्यात्माओं के मन के द्वार पर उपस्थित होकर उनसे मिलते हैं और जिस प्रकार के सम्बन्ध की मनुष्यात्मा को आकांक्षा हो, उस सम्बन्ध का अविस्मरणीय स्नेह और अलौकिक सम्बन्ध का अपार सुख भी देते हैं। ऐसा ही अनुभव प्राप्त करने का सौभाग्य हम मनुष्यात्माओं को अब प्राप्त है और जो इसका अनुभव प्राप्त करना चाहे उसका स्वागत है।

सभी को एक-जैसा अनुभव क्यों नहीं होता ?

कुछ लोग कहते हैं कि यदि परमात्मा का अनुभव होता है तो सबको एक-जैसा अनुभव क्यों नहीं होता ? उनका प्रश्न यह है कि हर धर्म के सन्त, महात्मा, ऋषि, मुनि अथवा अग्रगणी उपासक यह कहते आये हैं कि वे अपने **अनुभव** के आधार पर ही परमात्मा का परिचय दे रहे हैं। आज उन सन्त जनों के श्रद्धालु अनुयायी भी यही मानकर चल रहे हैं कि उनके मान्यवर धर्माचार्यों, मनीषियों अथवा सन्तों को परमात्मा के प्रत्यक्ष अनुभव हुए थे और कि उन सन्तों की वाणियों में जो-कुछ कहा गया है, वह सत्य कहा गया है। परन्तु फिर भी हम देखते हैं कि उन वाणियों के आधार पर जो धर्म टिके हैं, उनमें परमात्मा के बारे में भिन्न-भिन्न अथवा परस्पर विरोधी मन्तव्य हैं। ऐसा भी तो नहीं है कि एक ही व्यक्तित्व के बारे में अनेक पहलुओं से अनुभव बताये गये हों, बल्कि सिद्धान्ततः ही उनमें वैपरीत्य और विरोध स्पष्ट झलकता है। एक धर्म परमात्मा को 'सर्वव्यापक ज्योति' मान रहा है तो दूसरा उसे किसी धाम-विशेष का वासी मानकर उसे माता या पिता के सम्बन्ध से याद कर रहा है तो तीसरे धर्म में लोक और परलोक का जो वर्णन है, उसमें परमात्मा का न कोई नाम है न स्थान और न कोई सम्बन्ध। अतः प्रश्न उठता है कि क्या उन धर्म-विश्वासियों का यह कथन कि उनका ज्ञान भी अनुभवजन्य है, गलत है ? क्या वास्तव में उन्हें अनुभव हुए नहीं थे ? यदि उन्हें अनुभव हुए थे तो उनमें भेद क्यों, और यदि उन्हें अनुभव नहीं हुए थे तो उन नैतिकता-सम्पन्न धर्म-प्रिय लोगों ने यह कैसे कह दिया कि हमें अनुभव हुए ?

बात यह है कि अनुभव और मत अथवा वाद (Theory) दोनों साथ-साथ चलते हैं और दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि मन्तव्य अथवा सिद्धान्त (Theory) ठीक न हों तो अनुभव की-गई अथवा देखी-गई वस्तु अथवा स्थिति को ग़लत समझने की संभावना बनी रहती है। इसी प्रकार, यदि परीक्षण Observation or Test अथवा अनुभव ठीक न हो, तो उससे भ्रान्त मत (Theory) गढ़ने की संभावना भी तथैव बनी रहती है। अतः सही सिद्धान्त और सही प्रत्यक्ष हों तभी सम्पूर्ण सत्य का बोध होता है। उदाहरण के रूप में, एक समय था जब लोग यह मानते थे कि सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा करता है। कहने वालों का यह अपना अनुभव भी था क्योंकि देखने में यही सत्य मालूम होता था और आज भी ऐसा ही दिखाई देता है। अतः जिन लोगों ने अनुभव के आधार पर यह सिद्धान्त गढ़ा था कि

सूर्य पृथ्वी का चक्कर लगाता है, उसके पीछे उनकी कोई अनैतिक भावना नहीं थी, न उसके पीछे उनका कोई स्वार्थ ही छिपा था बल्कि कारण यह था कि उन्हें वे तथ्य ज्ञात नहीं थे जो आज मालूम हैं और जिन्हें आज प्रमाणित भी किया जा सकता है। इसी प्रकार, पुरातन काल में धार्मिक लोगों को भी जो अनुभव हुए उन्होंने अनुभवों को दूसरों के समक्ष रखा; उसके पीछे उनके मन में कोई अनैतिकता नहीं भी रही होगी। परन्तु उनके सामने लोक-परलोक तथा आत्मा और परमात्मा के विषय में वे तथ्य नहीं थे, जो होने से उन्हें सत्य का "इदं इत्थं" बोध होता। यही कारण है कि अनेक मनीषियों, चिन्तकों, दार्शनिकों, ऋषियों तथा मत-स्थापकों के सिद्धान्तों में अन्तर है।

इस विषय में हमें यह याद रखना चाहिये कि मनुष्य तो वैसे भी अल्पज्ञ है। देहाभिमान, मलिन संस्कार, सामाजिक प्रभाव, शारीरिक अथवा मानसिक रोग इत्यादि कई कारण ऐसे हो सकते हैं जिनके परिणामस्वरूप मनुष्य शतशः सत्य का साक्षात्कार नहीं करा सकता। एक परमात्मा ही इस विषय में समर्थ हैं। गीता में उनका वचन भी है कि सत्य का रहस्योद्घाटन वे स्वयं ही धर्म-ग्लानि के समय एक साकार माध्यम के द्वारा कराते हैं। अतः हम अपने जिस अनुभव का उल्लेख यहाँ शुरू में कर आये हैं, वह उन्हीं के कृपा-प्रसाद का फल है। मन गद्गद हो उठता है, चित्त भाव-विभोर हो जाता है, रोमांच हर्षोल्लास में प्रफुल्लित हो जाते हैं, हृदय हिलोरें लेने लगता है, आत्मा आनन्द में सराबोर हो जाती है। अतः सभी को यह कहे बिना नहीं रहा जाता कि जब वे आनन्द के सागर परमपिता हमें वरदान देने को आतुर हैं तब फिर हमें चाहिये कि झोली भरलें। अतः जी चाहता है कि दोनों हाथ उठाकर संसार के लोगों को हित-स्वर में कहा जाय कि—"हे प्राणियो, स्नेही बहनो और भाइयो, परमात्म-पुत्रो, उठो, परमपिता से पुनीत प्यार का वरदान ले लो, शान्ति और सुख के ख़ज़ाने की कुंजी प्राप्त कर लो और आनन्द के झरने में आत्मा को शीतल तथा आनन्दित कर लो। समय की पुकार सुनो, प्रभु की पुकार सुनो और हम हिताकांक्षियों के विनीत स्वर की ओर ध्यान दो।" —जगदीश

—०—

कृप्या ध्यान दीजिए

ज्ञानामृत का यह अंक १९८१-८२ वर्ष का ११ वां अंक है। अगला जून अंक इस वर्ष का अंतिम अंक होगा। १९८२-८३ वर्ष के लिए ज्ञानामृत के शुल्क इस प्रकार हैं :

वार्षिक शुल्क	१४.०० रुपये प्रति ज्ञानामृत
अर्द्ध वार्षिक शुल्क	७.०० ,, ,, ,,
विदेशों के लिए	७०.०० ,, ,, ,,

इस प्रकार ज्ञानामृत द्वारा बाबा का सन्देश जन-जन तक पहुंचाने अर्थ एक तो शुल्क कम कर दिया है दूसरा सर्विस हेतु प्रति ५० ज्ञानामृत के सदस्य बनाने पर २ ज्ञानामृत निःशुल्क भेजे जायेंगे और १०० सदस्य बनाने पर ५ प्रतियां निःशुल्क भेजी जायेंगी। आशा है कि आप इन प्रोत्साहन का पूरा लाभ उठायेंगे और ज्ञानामृत की सदस्य संख्या बढ़ायेंगे।

—व्यवस्थापक

—०—

आनन्द-दायिनी—"पवित्रता"

ब्र० कु० सूरज कुमार, मधुवन, आबू

'पवित्रता' शब्द ही कितना सुखदाई है और अपवित्रता अग्नि के समान सब कुछ भस्म करने वाली । पवित्रता शब्द महानता की याद दिलाता है । पवित्रता ही इस संगम युग की सर्व प्राप्तियों का साधन है। इसे जीवन का स्वाभाविक अंग बना लेना—हम पुरुषार्थियों का प्रथम कर्त्तव्य है।

'पवित्रता'—अधिकार से, हठ से नहीं—

पवित्रता हमारा मूल स्वभाव है; पवित्रता आत्मा का स्वधर्म है; इसके बिना आत्मा कराह उठती है। जब पवित्रता के लिए हठ किया जाता है तो वह आनन्ददायिनी नहीं रहती बल्कि एक तपस्या सी लगती है। बड़ा भारी त्याग सा महसूस होता है। आज तक संन्यासी हठ व हठयोग से पवित्रता धारण करते आये, यही कारण है कि विभिन्न परिस्थितियों में उनकी पवित्रता में ह्रास हुआ और उन्होंने इसे कठिन तपस्या कहा। या यों ही कहना यथार्थ होगा कि वे इसमें सम्पूर्णतया सफल नहीं हुए।

परन्तु वर्तमान समय शिव बाबा पवित्रता का वरदान हमारे लिए लाया है। उन्होंने हमें याद दिलाया कि तुम्हारा मूल स्वरूप पवित्रता है, ये अपवित्रता तो मध्य काल की देन थी । इसे भूल जाओ। तो जिन आत्माओं को उनका मूल स्वरूप याद आ गया, उनके लिए ये पवित्रता वरदान सिद्ध हो गई और तपस्या नहीं रह गई। अतः हमें पवित्रता को अधिकार से स्वीकार करना चाहिए। इसे वरदान रूप में स्वीकार करना ही इसे सहज बनाना है। इसमें किसी भी तरह के हठ की आवश्यकता नहीं।

अव्यक्त बाप-दादा के महावाक्यों में—

ये न सोचो कि पवित्र बनना है,

बल्कि ये सोचो—

कि मैं हूं ही परम पवित्र आत्मा

हम अगर इस सम्बन्ध में सोचें तो हमें करना ही क्या है—केवल विचारों को ही तो बदलना है।

'पवित्रता व एकाग्रता'

पवित्र बुद्धि ही एकाग्र हो सकती है। क्योंकि एकाग्रता के लिए बुद्धि का शक्तिशाली होना आवश्यक है। और बुद्धि, पवित्रता से ही शक्तिशाली होती है। पवित्र बुद्धि ही ज्ञान की गहनता को जान सकती है। पवित्र बुद्धि ही शिव बाबा की दिव्य व सूक्ष्म प्रेरणाओं को ग्रहण कर सकती है। वास्तव में यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि पवित्र बुद्धि ही संगम युग की महान उपलब्धि है।

पवित्रता की कमी ही अनेक अभाव पैदा करती है—

अगर मन में द्वन्द्व है तो कदम-कदम पर अभाव व असन्तुष्टता का अनुभव होता है। मन का झुकाव अनेक तृष्णाओं की ओर चला जाता है। मन गहन शान्ति वा परमशान्ति की अनुभूति से दूर चला जाता है। उसे कुछ खोज, कुछ चाहना बनी ही रहती है।

अतः इस संगम युग पर पवित्रता को संकल्प मात्र भी खोकर विश्व का कोई सर्वोच्च पद पा लेना भी मूल्य विहीन है। संगम युग पर भगवान के भी मन को जीत लेने वाली प्राप्ति चारों युगों में सर्व महान प्राप्ति है जिसका आधार पवित्रता ही है। अनेक वैभव, सांसारिक प्राप्तियां, पद व धन, सांसारिक कीर्ति व यश तो चारों युगों में भी प्राप्त की जा सकेगी। परन्तु पवित्रता का आनन्द व ईश्वरीय

समीपता का रस केवल अब ही लिया जा सकता है।

'पवित्रता' शिव बाबा की अमानत है—

इस संगम युग पर शिव-बाबा ने हमें ये महान पूंजी दी है। इसे सुरक्षित रखना हमारी वफादारी है। अगर हम इसे व्यर्थ करते हैं तो हम परमपिता के वफादार बालक सिद्ध नहीं होंगे और हमें उसके सच्चे प्यार से वंचित रहना पड़ेगा।

पवित्रता निर्भय बनाती है—

जीवन में अनेक प्रकार के भय, निराशा व उदासी अपवित्रता की ही देन है। पवित्रता—बहुत अधिक निर्भयता, अडोलता व आत्म-सम्मान पैदा करती है। माया को चुनौती देने की, विघ्नों में अडोल रहने की शक्ति पवित्रता में ही है। नहीं तो मन में कभी हार का भय, कभी अपमान का भय, कभी दूसरों के दुर्व्यवहार का भय, कभी गलती प्रत्यक्ष होने का भय बना ही रहता है। पवित्रता बेगमपुर का बादशाह बनाती है। विश्वास पैदा हो जाता है कि मैं जैसा चाहूँ, वैसा ही कर सकता हूँ।

पवित्रता—ईश्वरीय सेवा का श्रेष्ठ साधन

एक है साधनों द्वारा सेवा, जिसमें अनेक विघ्न हैं। दूसरी है पवित्रता की साधना द्वारा सेवा जो अनेकों को निर्विघ्न बनाती है। पवित्रता हमारी सेवा का मुख्य आधार है। वित्रता की कमी—धन, तन, व समय द्वारा की गइ मेहनत को निष्फल कर देती है। और पवित्रता के श्रेष्ठ आकर्षण में सहज ही आत्माएं परमपिता की ओर खिची चली आती हैं।

पवित्रता की तरंगें फैलाकर, हम विश्व के दूषित वायुमंडल को स्वच्छ करते हैं। पवित्रता के बल से हम अनेक आत्माओं का आह्वान कर सकते हैं। पवित्र बुद्धि होने पर हम अन्तः वाहक शरीर द्वारा ही दूसरों को ईश्वरीय सन्देश दे सकते हैं। और पवित्रता के द्वारा ही हम कमजोर आत्माओं को बल दे सकते हैं। पवित्रता की शुद्ध तरंगों द्वारा ही हम संगठन को शक्तिशाली व निर्भय बना सकते हैं। अर्थात् जितनी हमारी पवित्रता, उतनी सेवा स्वतः ही होती है।

पवित्रता—श्रेष्ठ भाग्य का आधार

हम इस संगम युग पर अपनी पवित्रता द्वारा अपने चारों युगों के भाग्य को जान सकते हैं। जितनी श्रेष्ठ पवित्रता, उतना ही श्रेष्ठ भाग्य। जितनी पवित्रता, उतने ही ईश्वरीय खजानों के अधिकारी। जिसे भगवान के द्वारा पवित्रता रूपी खजाना मिला हो, वह सचमुच ही सबसे बड़ा धनवान है। उसके पास अखुट पूँजी है, उसे और क्या पूंजी चाहिए। पवित्रता के बल से स्वर्ग का तख्त जीता जा सकता है।

पवित्र आत्मा चमकते सूर्य के समान है—

जैसे सूर्य अपनी किरणें फैलाकर समस्त विश्व को प्रकाशित कर देता है वैसे ही पवित्र आत्मा, अपनी पवित्रता की किरणों द्वारा संसार से माया का अन्धकार मिटाने में समर्थ है। पवित्रता विश्व के ऊपर मानो छत्रछाया है, हमारी पवित्रता द्वारा अनेक आत्माओं की रक्षा होती है। हमारी पवित्रता से सृष्टि को बल मिलता है। अगर संसार में पवित्रता न हो तो पाप भार से पृथ्वी डोलने लगती है। अगर संसार में पवित्रता के दीप न जलें तो वहां का भयानक अन्धकार अति डरावना हो जाए।

पवित्रता आत्मा का सर्व श्रेष्ठ शृंगार है—

पवित्रता से बढ़कर मनुष्य की दूसरी कोई सुन्दरता नहीं। इस शृंगार के आगे सांसारिक शृंगार बनावटी व फीके लगते हैं। पवित्रता से सजी हुई आत्मा का व्यक्तित्व निखर उठता है। पवित्र आत्मा को किसी बाह्य शृंगार की आवश्यकता नहीं रहती। बाह्य शृंगार पवित्रता के शृंगार को छुपा देता है। बाह्य सादगी पवित्रता के शृंगार में चार चाँद लगा देती है।

पवित्रता सर्व गुणों की जननी है—

पवित्रता के शृंगार के बाद आत्मा में शेष गुण

स्वत: ही आने लगते हैं। शुभ-भावनाएं पवित्रता को प्रत्यक्ष करने लगती हैं।

आन्तरिक मुस्कराहट चेहरे से चमकने लगती है। गहन शान्ति सभी को सान्त्वना देने लगती है। उनकी सन्तुष्टता अनेकों को आगे बढ़ाने लगती है। उनका स्वमान सर्व को मान देने लगता है। उनकी अन्तर्मुखता उनकी महानता को दिखाने लगती है। उनकी सुखदायी वृत्ति दूसरों पर सुख बरसाने लगती है।

पवित्रता ब्राह्मण जीवन का श्वास है—

जिन आत्माओं ने ब्राह्मणत्व स्वीकार कर लिया और सम्पूर्ण पवित्रता अपना लक्ष्य बना लिया, उन्हें पुन: अपवित्रता की राहों की ओर मुड़कर निहारना भी नहीं चाहिए। अपवित्रता, आनन्ददायिनी नहीं दु:खों का मूल व अशान्ति का कारण है। जैसे श्वास के लिए ऑक्सीजन आवश्यक है, वैसे ही ब्राह्मण जीवन के लिए पवित्रता। जैसे ऑक्सीजन में अन्य गैस मिलने से श्वांस फूलने लगता है, वैसे ही पवित्रता में मिलावट होने से ब्राह्मण जीवन का श्वास भी फूलने लगता है। अत: सम्पूर्ण पवित्रता के राही को पूर्ण चेतना द्वारा इसे सुदृढ़ करने में लग जाना चाहिए।

पवित्र आत्मा पर ही भगवान का प्यार बरसता है—

ऐसे तो भगवान का प्यार सभी आत्माओं को प्राप्त होता है, तो भी पवित्र आत्मा उसके प्यार को अधिक खींचती है। क्योंकि वे आत्माएं भगवान के स्वर्ग स्थापना के कार्य में सम्पूर्ण सहयोगी होती हैं और शिव बाबा उन्हें अपने समान समझते हैं।

सम्पूर्ण पवित्र आत्मा ही अष्ट रत्न

आठ की माला में कौन सी आत्माएं होंगी इसका उत्तर देते हुए बाबा ने कहा था कि जो सम्पूर्ण पवित्र बन जाएंगी। पवित्रता के महत्त्व को जानकर उसमें स्थित होना पूर्ण हितकारी है। पवित्र आत्मा का एक-एक संकल्प अन्य आत्माओं के लिए वरदान बन जाता है।

पवित्र आत्मा सृष्टि का नूर है—

जैसे शरीर में आंख और आंख में नूर का परम महत्त्व है वैसा ही पवित्र आत्माओं का सृष्टि में महत्त्व है। सृष्टि पर सुख-शान्ति का आधार पवित्र आत्माएं ही हैं। अगर पवित्र आत्माएं न हों तो सृष्टि वीरान बन जाए, सृष्टि पर सुख-शान्ति का अकाल पड़ जाए। पवित्र आत्माएं जग को रोशन करने वाले जग के दीपक हैं।

पवित्रता ही महानता है व श्रेष्ठ व्यक्तित्व है—

अगर कोई महान समझा जाने वाला पुरुष पवित्र नहीं तो उसकी महानता सुगन्धित शव के समान ही है। पवित्र आत्मा में ही महान कार्य करने की क्षमता होती है। चारों युगों में सर्वश्रेष्ठ महानता इस पुरुषोत्तम संगम युग की पवित्रता में ही निहित है।

पवित्रता का महत्व अवर्णनीय है। इसको धारण करने वाली आत्माएं ही इसे आध्यात्मिक उन्नति का साधन अनुभव करती हैं। वे ही इसका सच्चा आनन्द प्राप्त करती हैं। लोग अपनी शक्तियों को खोकर क्षणिक आनन्द लेते हैं और योगी शक्तियों के संग्रह में आनन्दित होते हैं।

पवित्रता ही ईश्वरीय अनुभूतियों का आधार—

सम्पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद ईश्वर द्वारा कही गई हर स्थिति का अनुभव पवित्रता की श्रेष्ठ स्थिति द्वारा ही सम्भव है। अगर पवित्रता में ही द्वन्द्व है तो वे स्थितियां बहुत दूर की वस्तु दिखाई देती हैं।

सम्पूर्ण पवित्रता की ३ स्थितियां—

जब कोई भी पुरुषार्थी मन के संघर्ष को समाप्त करके सम्पूर्ण पवित्रता की ओर चलता है तो उसकी प्रथम स्थिति आती है—व्यर्थ संकल्पों से मुक्ति। इसके बाद की स्थिति होती है—देह के आकर्षण की वृत्ति की समाप्ति। और अन्त में होती है स्वप्न में

भी पूर्ण शुद्धि। जब हमारे मन से देह का आकर्षण भी समाप्त हो जाए, व स्वप्न भी स्वच्छ हो जाएं, तब हम सम्पूर्ण पवित्रता की स्थिति प्राप्त करते हैं। इस स्थिति में किसी भी मनुष्यात्मा के प्रति हमारा आकर्षण नहीं रह जाता। हमारी सर्व प्राप्तियों का केन्द्र बिन्दु केवल एक शिव बाबा ही रह जाते हैं।

पुरुषार्थ…

अपनी पवित्रता की स्थिति को परिपक्व करने के लिए प्रतिदिन 10 मिनट एकान्त में पवित्रता के महत्व पर चिन्तन करना चाहिए। यह महत्व हमें महत्वशाली बनाएगा। जितना-जितना पवित्रता का महत्व अनुभव में आता जाएगा, पवित्रता हमारे जीवन में समाती जाएगी। और श्रेष्ठ पुरुषार्थी को गन्दे नाटक देखना, गन्दी कहानियां पढ़ना व गन्दे गीत सुनने से दूर रहना चाहिए। तो अवश्य ही हम जीवन में पवित्रता के आनन्द को प्राप्त होंगे। □

पद्मासन या पद्म आसन

ब्र० कु० आत्मप्रकाश, मधुबन, आबु

भक्त लोग पद्मासन पर विराजमान होकर परमात्मा का ध्यान करते हैं। वे इसे सहज आसन मानते हैं। पद्मासन पर बैठकर ही प्राणायाम भी करते हैं—इसे स्वस्थ तन, मन का साधन समझते हैं। परन्तु इस पद्मासन पर बैठने से न तो वे पदमों की कमाई ही कर सके और न ही उनका जीवन पद्म समान सुगन्धित बना। इस सहज आसन पर बैठते-बैठते उनका जीवन और ही कठिन बनता गया। वे बैठे तो रहे सहज आसन पर, परन्तु मन मुश्किलातों में फंसता गया—मन डावां डोल रहा। इसलिए यह आसन उनके जीवनरूपी आसन को हिलाने से बचा नहीं सका।

परन्तु अब परमात्मा स्वयं आकर हमें पद्मासन का सही अर्थ बताते हैं। जैसे देवी-देवताओं को पद्म पर बैठे चित्रित किया जाता है। जो कि उनके पुष्प तुल्य पवित्र, न्यारे व प्यारे जीवन का प्रतीक है। इसी प्रकार परमात्मा हमें भी पद्म तुल्य जीवन बनाने की प्रेरणा देते हैं कि भले ही तुम वास कलियुग रूपी कीचड़ में रहो, पर कमल पुष्प समान निर्लिप्त रहो। तब ही तुम्हारा जीवन अति सरल व सुखदाई हो सकेगा।

इस प्रकार हम पद्मासन पर बैठकर अपनी बुद्धि को इन पांच तत्वों के पार परमधाम में ले जाते हैं और अपने परमपिता परमात्मा शिव पर एकाग्र करते हैं जिससे हमारे पाप कट कर हमारा जीवन फूल की तरह पवित्र, विकारों की अग्नि से सुरक्षित हो जाता है और हमारे कदम-कदम में पदमों की कमाई होती है। हमारा जीवन सुख-शान्ति से भर जाता है।

वास्तव में यह पद्मासन ही कमलासन है। अर्थात् हम कमल पुष्प समान न्यारे, निर्लिप्त आसन पर विराजमान होकर ही योग-युक्त हो सकते हैं और कर्मेन्द्रियों पर विजय प्राप्त करके विश्व राज्य के अधिकारी बन सकते हैं। तो हम राजयोगियों के पुरुषार्थ को चैक करना है कि हम सारे दिन ही इस कमल आसन पर बैठे रहते हैं या कभी बैठते हैं, कभी उतर जाते हैं क्योंकि कलियुग में दुख, अशान्ति व विकारों की अग्नि से बचने का साधन ही है कि हम सदा ही स्वयं को पद्मासन पर स्थित रक्खें। □

"सौन्दर्य की परिभाषा"

—ब्र० कु० राजकुमारी, शालीमार बाग, देहली

शाम का समय। एक स्वच्छ, शान्त और सफेद कक्ष। श्वेत वस्धारी शुचिता स्थिर, दत्तचित्त, योग की मुद्रा में बैठी है। चेहरे से अपार हर्ष व शान्ति झलक रही है। रंग-रूप में ताज़गी, सात्विकता व सौम्यता है। एक मूरत सी लग रही है।

तभी प्रवेश-द्वार पर कोई छाया हिलती सी नज़र आती है। कुछ आगे बढ़ती है, फिर ठिठक कर वहीं खड़ी हो जाती है, जैसे कि आगे बढ़ने का साहस न जुटा पा रही हो।

शुचिता को आभास हो जाता है। वह अति शोभनीकता से, सहज भाव से उठकर प्रवेश-द्वार तक जाती है। क्या देखा कि एक महिला खड़ी है।

शुचिता उसे देख अति अपनत्व से—"आइए, बहन जी, आइए न!" और उसे कमरे में आने का संकेत करते हुए अन्दर की ओर चलती है। वह महिला भी द्रवित सी उसके पीछे-पीछे चलती है। दोनों आमने-सामने पालती लगा कर बैठ जाती हैं।

महिला के चेहरे पर थकान, चिन्ता तथा जीवन की बाज़ी हार जाने की सी रेखाएँ हैं। बाल अधपके, शरीर पर मोटापा तथा उम्र ढल जाने की स्थिति और एकदम बेरौनक सी व घबराई सी।

कमरे में बैठते ही उसे कुछ राहत सी महसूस होती है। आह! इतनी शान्ति! कितनी स्वच्छता! दीवार की एक-एक ईंट जैसे कि आह्लादित कर रही हो।

अचानक उसका ध्यान शुचिता के स्वर से भङ्ग होता है।

शुचिता—बहन! आप कहाँ से आई हैं?

महिला—घर तो यहाँ सामने ही है। रोज़ अपने कमरे से देखती थी। यहाँ कुछ आकर्षण सा लगता, आने कोदिल करता था पर···

(आँखें भर आती हैं और चुप हो जाती है।)

शुचिता—क्या बात है बहन? आप कुछ अशान्त सी नज़र आ रही हैं! (शुचिता को यह महिला कुछ जानी-पहचानी सी लग रही थी)

महिला—क्या सुनाऊँ बहन जी! मेरा नाम जसबीरी है। (शुचिता जसबीरी नाम सुनते ही चौंक सी गई और ग़ौर से उस महिला को देखने लगी। महिला कहती जा रही थी) छोटी सी उम्र में मेरी शादी हो गई। एक के बाद एक, हर साल लड़की पैदा होती गई और···

(आगे वह बोल न सकी, गला भर्रा गया)

शुचिता—(गहरे विचार में जैसे दूर कहीं अतीत से बोल रही हो) हाँ बहन, फिर···

महिला—वो तो कुछ कमाते नहीं, पीते भी बहुत हैं, तिस पर···

शुचिता—(उत्सुकता से) तिस पर क्या···!

महिला—(आह भरती हुई) क्या सुनाऊँ बहन जी। यदा-कदा हाथ भी उठा देते हैं।

शुचिता—ओह! ···नारी की यह दशा।

महिला—कहीं नौकरी भी नहीं कर सकतीं। पढ़ी-लिखी जो नहीं। जब पढ़ने के दिन थे तब तो···

शुचिता—तब तो···! तब क्या···?

महिमा—ओह! तब तो खाने और फैशन में रही।

शुचिता—उन दिनों आप कहाँ रहती थीं?

महिला—उन दिनों मैं "रोशन आरा रोड" रहती थी। (अब तो शुचिता बहुत चौंकी। अतीत के कई चित्र उसके मनस्पटल पर उभरने लगे। अन्दर से बार-बार आवाज़ आती यह तो वो ही है। क्या यह बेढंगी दीखने

वाली औरत वही जसबीरी है, जो किसी समय परम सुन्दरी थी। पर अतीत के उन दृश्यों को, आवाज़ों को मन में दबाए रखा।)

प्रत्यक्ष में—कोई बात नहीं बहन। आपने वो पढ़ाई नहीं पढ़ी, अब आप ईश्वरीय विद्या पढ़ें। आप बहुत सौभाग्यशालिनी हैं जो···

महिला—सौभाग्यशालिनी और वो भी मैं! हुँ! (लम्बी साँस लेते हुए) हाँ! यहाँ आई हूं तो हो सकता है कुछ भाग्य खुल जाए।

शुचिता—(अति स्नेह से उसके कंधे पर हाथ रखकर) बहन! यह ईश्वर का सच्चा-सच्चा दरबार है। यहाँ तो पैर रखना ही मानो सौभाग्य के द्वार पर आना है। आज से आपका प्रवेश यहाँ हो गया।

महिला—पर मैं तो बहुत पतित और दुखिया हूँ। इतनी पवित्र जगह मेरी किस्मत में कहाँ? यहाँ के योग्य तो आप जैसी देवी ही हैं।

शुचिता—बहन! यह बाबा का घर है। आप भी बाबा की बच्ची हो। यहाँ आपका भी उतना ही हक है जितना मेरा। भगवान तो आपका भी बाप है न।

महिला—नहीं-नहीं, दीदी। आपके बराबर मैं कहाँ? आप तो जैसे साक्षात् देवी हो। इस मन्दिर की चेतन मूरत हो। आह! आप कितनी तेजोमयी हो·····

(शुचिता के मनस्पटल पर अतीत की घटनाएँ एक के बाद एक आने लगीं, पर कन्ट्रोलिंग पावर से उन्हें दबा कर बीच में ही·····)

शुचिता—शिव बाबा ज्योतिपुंज हैं। हम सभी आत्माएँ ज्योति बिन्दु हैं। बस, उसे याद करो तो तेज स्वतः ही आ जाता है। बहुत शान्ति मिलती है उससे वर्सा मिलता है। आप भी बाबा से वर्सा पा सकती हो।

महिला—वर्सा! वो क्या होता है?

शुचिता—भगवान का वर्सा, अर्थात् शान्ति-सुख···

महिला—क्या मुझे सचमुच शान्ति मिल सकती है!

शुचिता—क्यों नहीं? आइए आपको अभी ही शान्ति का अनुभव कराते हैं।

उसके बाद शुचिता धीरे-धीरे योग की Commentary करती है। महिला बड़े ध्यानपूर्वक शुचिता को देखती है, तो लगता है मानो इस देवी को पहले भी कहीं देखा है। पर समझ नहीं पा रही कि यह कौन है? जैसे वह अतीत में दूर कहीं खो गई हो।

शुचिता—(सफेद प्रकाश करके) बहन!·····

(महिला अतीत की परछाइयों से घिरी हुई आश्चर्य की सी मुद्रा में)

शुचिता—(उसके प्रकम्पनों को भाँपती सी)····· अच्छा! आप कल फिर आना।

रात्रि का समय है। सभी जिज्ञासु जा चुके हैं। शुचिता बार-बार भूलने की कोशिश करती है, परन्तु फिर-फिर अतीत उसके सामने घूम जाता है और जैसे वह बीस-बाईस वर्ष छोटी हो गई हो और याद आए वे दृश्य जब वह अज्ञानी थी और·····

रोशनआरा रोड में एक तंग गली से लगता हुआ एक मुहल्ला सा। उसमें दस-बारह घर हैं, जिनमें निम्न-मध्यमवर्गीय परिवार रहते हैं। सब घरों के बीच में एक बड़ा सा सांझा आँगन जिसमें गर्मियों में शाम को सब अपनी-अपनी खटिया निकाल कर अपने-अपने घरों के आगे डाल देते। हर एक की यही कोशिश होती कि वह आँगन की अधिक से अधिक जगह घेर ले।

इन घरों में से किसी की भी गतिविधियाँ एक-दूसरे से छिपी न रहती थीं। कौन कब अपने घर में आता है, कब जाता है। किसका किससे लगाव है, किसकी कब किससे अनबन होती है। इन सब बातों की तरफ मुहल्ले की औरतें बहुत ध्यान देतीं। कोई न कोई चर्चा का विषय बना ही रहता। औरतों और लड़कियों का अधिकांश समय दूसरों की आलोचना में ही कटता। उनका एक बड़ा सा झुण्ड

बना रहता और जब भी कई गुज़रता तो सभी उसे तिरछी निगाहों से देखतीं, फिर उसकी पीठ होते ही एक ठहाका सा गूंजता।

शुचिता भी उन दिनों इसी मुहल्ले में रहती थी। खानदान तो Royal था पर किन्हीं परिस्थितियों वश उन्हें वहां कमरा लेना पड़ा था। तब वह आठवीं कक्षा में पढ़ती थी। उसका बहुत मन होता कि वह भी उस झुण्ड में बैठे, परन्तु घर में पितामह का अंकुश बहुत कड़ा था। माता जी भी उसे कभी भी वहां न बैठने देतीं। वह बहुत नासमझ थी और माँ हर समय पढ़ने की ताकीद करती रहतीं। वह विवश होकर पुस्तक तो लेकर बैठती, परन्तु महिलाओं के उस झुण्ड के ठहाके उसे डिस्टर्ब करते। मन ही मन वह माँ को बहुत कोसती और इस ताक में रहती कि कब नाना और माँ घर से बाहर निकलें तो वह भी इन ठहाकों में शामिल हो। पर दुर्भाग्यवश ऐसा अवसर कभी न आता।

जसबीरी भी उसी मुहल्ले की लड़की थी। वह दिन-रात उसी महफिल में बैठती। दिन में कई-कई बार पोशाक बदलती तथा कोई भी खोमचे वाला आता तो उसे कभी खाली न लौटाती। सारा दिन कभी चाट, कभी पकौड़ी, कभी गोलगप्पे जाने क्या-क्या खाती ? उसके पिता के गाढ़े पसीने की कमाई यूं ही लुटाया करती।

शुचिता की माँ उसे इस प्रकार खोमचे वालों का कुछ भी न खाने देती। सदैव यही कहती—"शुचि ! बेटा तेरा जो भी दिल करे वह मैं घर में बना कर दूंगी। पर बाज़ार का न खाने दूंगी। इससे बच्चे चटोरे हो जाते हैं।" शुचिता मन मसोस कर रह जाती।

खैर ! समय गुज़रता गया। शुचिता ने हायर सैकन्डरी कर ली। अब उसका कालेज में प्रवेश होने वाला था। उसे अच्छी तरह से याद आया कि जब वह पहले-पहल साड़ी पहन कर इन्टरव्यु देने जा रही थी। माता जी साथ थीं। ज्यों ही वह उस महफिल के समीप से गुज़री तो पीछे से एक आवाज़ आई—"पढ़ाई कोई सोणया थोड़ेई बणा देन्दी ए।" अर्थात् पढ़ाई कोई खूबसूरती थोड़े ही ला देती है।

यह स्वर जसबीरी की माँ का था। जसबीरी शारीरिक रूप से अत्यन्त सुन्दर थी। छरहरा गोरा बदन, तीखे नक्श तथा काले घुंघराले लम्बे बाल। वह सारा दिन अपने शरीर को जैसे सहेज कर रखती। उसकी माँ उससे कोई काम न करवाती कि कहीं जसबीरी के हाथ खराब न हो जाएं। सारे मुहल्ले में उसके सौन्दर्य की चर्चा थी। उसकी माँ उसके सौन्दर्य को निहार-निहार कर गर्व से फूली न समाती थी। वैसे वह दसवीं में तीन बार फेल हो चुकी थी।

इसके विपरीत, शुचिता मझोले कद की, गेहुएँ रंग की एक सीधी-सादी लड़की थी। यूं तो देखने में कोई बुरी न थी, परन्तु जसबीरी के सामने तो···

शुचिता की माँ उसे एक आदर्श रूप में देखना चाहती थी, उसे महान व चरित्रवान देखना चाहती थी। उसकी सदा यही अभिलाषा रहती कि "मेरी बच्ची लाखों में एक हो।" इसीलिए वह उसे उन महिलाओं के संग से सदा बचाकर रखती। भोली शुचिता इन बातों को न समझती थी और सदा यही सोचती कि—"जसबीरी की माँ तो बहुत अच्छी है।"

शुचिता के कालेज पहुँचने से पहले ही जसबीरी और उसकी अन्य साथिनें प्रायः कहा करतीं—"कालेज में पढ़ी लड़कियाँ तो चरित्रहीन होती हैं। वहां एक ही डैस्क पर एक लड़का तथा एक लड़की इकट्ठे बैठते हैं। कालेज में तो लड़की को भेजना ही न चाहिए·····।"

शुचिता बेचारी तो कुछ जानती न थी। सोचती शायद ऐसा ही होता होगा। उसकी माता जी उसे आश्वासन दिया करती—"शुचि बेटे ! इन्होंने कोई कालेज देखे हैं क्या, जो तुम उनकी बातें सुनती हो····· ।"

समय गुज़रता गया। शुचिता ने एम० ए० किया तथा आगे और ऊँची शिक्षा पाने में व्यस्त

रही। पर एक बात हमेशा उसे खाती रही। बार-बार उसके कानों में गूंजता—"पढ़ाई कोई सोणयाँ थोड़े ई बणा देन्दी ए!" अर्थात् पढ़ाई से कोई शारिरिक सौन्दर्य थोड़े ही आ जाता है।

इसी बीच जसबीरी का विवाह हो गया। उसका पति भी अति सुन्दर था। जसबीरी के पिता ने दहेज में बहुत कीमती वस्तुएँ दीं। अपने बलबूते से बाहर का दिया। इतना दिया कि घर में खाने के भी टोटे पड़ गए। पोर-पोर उधार में फँस गया।

एक दिन शुचिता ने देखा कि जसबीरी अपने पति के साथ आई थी। अति सजी-सँवरी सी, सोलहों श्रृंगार किए हुए। जैसे कोई अप्सरा धरती पर उतर आई हो। उसने बहुत इठला कर शुचिता से "हैलो" की। उत्तर में शुचिता भी मुस्कुराई थी, पर फिर वही शब्द मन में कौंध गए—"पढ़ाई कोई सोणयाँ थोड़े ई बणा देन्दी ए।"

और फिर शुचिता को अच्छी तरह याद आया कि फिर वह वहां से एक अच्छी कालोनी में शिफ्ट हो गयी थी; वह पहले से भी अधिक व्यस्त हो गई। इसी बीच एक बार उसी मुहल्ले का कोई परिचित उसे मिला था जिससे उसने सुना कि जसबीरी और उसके पति ने सारा दहेज बेच कर खा-पी डाला और घूमने-फिरने में सब खत्म कर दिया।

उसके बाद शुचिता को कुछ भी याद नहीं। फिर तो उसकी जीवन-दिशा ही बदल गई। उसके जीवन का लक्ष्य बदल गया।

शुचिता ने परमपीता परमात्मा को जीवन-साथी चुना, जो कि कभी धोखा नहीं देता, कभी बूढ़ा नहीं होता। जिसके स्मरण मात्र से ही आत्मा हर्ष का अनुभव करती है। अब तो शुचिता नाम भी सार्थक हो उठा था। यथा नाम तथा कर्मणा व मनसा भी थी। उसके जीने के मापदण्ड बदल गए। उसका तो जैसे दूसरा जन्म हो गया हो। उसकी दृष्टि में अलौकिकता आ गई। उसके विचारों में आध्यात्मिकता आ गई और उसकी चलन में रूहानियत वह ज्ञानामृत पीती, ज्ञान रत्न सँजोती और बाँटती। दिव्य गुण उसका श्रृंगार था, आत्म स्मृति की बिन्दिया थी और पवित्रता की याती थी।

कोई स्थूल श्रृंगार न करती, पर उसके चेहरे की चमक निरन्तर बढ़ती गई। उसका स्वास्थ्य पहले से भी अच्छा हो गया।

और फिर उसकी आत्मिक उन्नति इतनी हुई कि उसने अपना जीवन ही ईश्वरीय सेवा में समर्पित कर दिया और तन-मन-धन से आध्यात्मिक सेवा करने लगी।

अब पहले की शुचिता मर चुकी थी, वह ईश्वरीय सेवाकेन्द्र पर आध्यात्मिक शिक्षिका थी। श्वेत वस्त्रधारिणी थी। अपना तथा अन्य आत्माओं का जीवन पावन कर रही थी। वह बहुत प्रसन्न थी। न धन की चिन्ता, न तन का कष्ट और न ही कोई पारिवारिक झमेला। फिर भी पूरा विश्व ही परिवार था। यूं तो उसकी दिनचर्या में क्षण भर भी ऐसा न होता, जो वह खाली बैठ सके, तिस पर भी वह बहुत हर्षित थी क्योंकि उसका जीवन सार्थक हो रहा था।

इतने वर्षों की हो जाने पर भी वह युवती सरीखी ही 'फ्रैश' और कार्य में फुर्तीली थी। उसे अपना पहला जीवन तो याद ही न था। वह स्वयं को सारे संसार में परम सौभाग्यशाली तो क्या, पद्मापद्मभाग्यशाली समझती थी। उसे गर्व था कि भगवान ने उसे चुना है। जो समय मिलता उसमें योग द्वारा अविनाशी कमाई करती। शाम को प्रतिदिन साढ़े छः से सात तक वह योगाभ्यास करती, आज भी इसी अभ्यास में कि वह महिला·····

और फिर उस महिला के बोल उसे याद आए—"आप तो देवी हो! कितनी तेजोमयी हो···।" ओह! यह वही जसबीरी थी? कितनी अशान्त लग रही थी! बेचारी कितनी दुखियारी···। कहाँ गया उसका सौन्दर्य? वह असमय ही इतनी बूढ़ी हो गई···और शुचिता में जाने कहाँ से आया था इतना सौन्दर्य! इतना आकर्षण! आज पासा पलट

(शेष पृष्ठ 20 पर)

सचित्र समाचार

अमरेली में "आध्यात्मिक मेले" के समाप्ति समारोह में गुजरात के पंचायत मंत्री अपना वक्तव्य दे रहे हैं। साथ में स्टेज पर ब्र० कु० गीता, ब्र० कु० भारती जी बैठी हैं

जयपुर में एक आध्यात्मिक परिचर्चा में ब्र० कु०पूनम जी भाषण कर रही हैं। मंच पर उपस्थित हैं शिव कुमार मान सिंह जी, जे० एस० बाबेल तथा जे० एस० सिंघवी →

महुआ(गुजरात) में उपसेवा केन्द्र की ओर से विशेष डाक्टर्स के स्नेह मिलन कार्यक्रम में गीता बहन राजयोग पर प्रवचन कर हैं। साथ में अन्य बहन-भाई दिखाई दे रहे हैं →

अमृतसर में मेला उद्घाटन समारोह में भ्राता सरदारा सिंह जी डिप्टी कमिश्नर को ब्र० कु० राजबहन ल० ना० का चित्र भेंट कर रही हैं

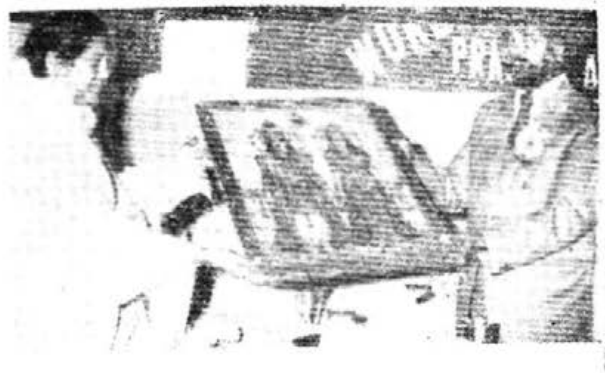

गोवा सेवा केन्द्र की ओर से (कोकण) राणापुर में रखी गई राजयोग प्रदर्शनी का उद्घाटन वहां के बैंक मैनेजर भ्राता कारेकर जी ने किया। साथ में ब्र० कु० शोभा जी, कमल जी एवं अन्य भाई-बहन याद में खड़े हैं

सुरयापेट (आ० प्र०) में आध्यात्मिक प्रदर्शनी के उद्घाटन के अवसर पर बोलते हुए भ्राता टी० अन्जनेयुल, मुन्सिफ़ मैजिस्ट्रेट सुरयापेट। मंच पर (वाएं से) ब्र० कु० मोहन, बसन्त कुमार जी, ब्र० कु० लीला तथा शकुन्तला जी →

ग्वालियर में महावीर जयन्ती समारोह के अवसर पर सर्व धर्म सम्मेलन में मंच पर विराजमान हैं सर्व धर्मों के प्रतिनिधि तथा ब्र० कु० प्रतिभा बहन

सिद्धपुर में संग्रहालय का उद्घाटन वहां के डी० एस० पी० भ्राता गुरुदयाल सिंह जी कर रहे हैं। उनका साथ दे रही हैं ब्र० कु० मनोहर इन्द्रा जी। साथ में अन्य ब्र० कु० भाई-बहन खड़े हैं

वर्धा स्थित कारागृह में वर्धा सेवा केन्द्र की ओर से कैदियों के साप्ताहिक कोर्स के पश्चात् समापन कार्यक्रम में ब्र० कु० शोभा बहन जेलर भ्राता देवधर जी को ईश्वरीय सौगात भेंट करते हुए

सेवा समाचार चित्रों में

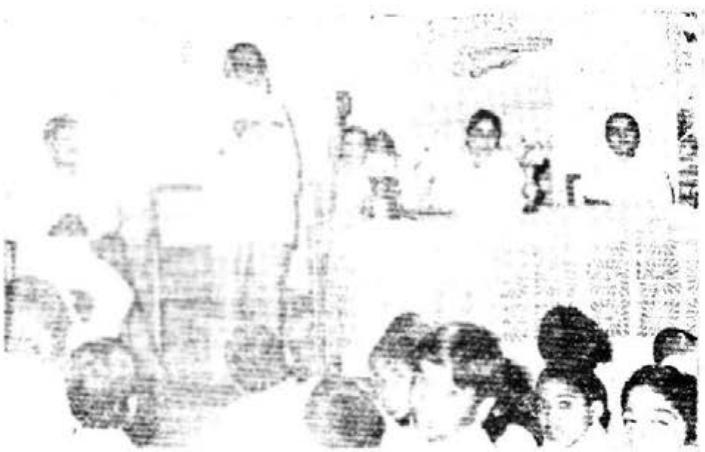

नारायण गांव (महाराष्ट्र) में आध्यात्मिक समारोह में ब्र० कु० सुन्दरी जी तथा अन्य ब्र० कु० भाई-बहन मंच पर बैठे हैं →

वरगल सेवा केन्द्र की ओर से जनगांव निकाली शोभा-यात्रा का दृश्य ↓

डाक पत्थर सेवा केन्द्र की ओर से एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन एस० डी० एम० भ्राता आर० बी० ललित ने किया

मणीनगर (अहमदाबाद) सेवा केन्द्र द्वारा आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी उद्घाटन समारोह में प्रवचन करती हुई ब्र० कु० मंजू बहन, साथ में अम्बिका विद्यालय के प्रिंसीपल भ्राता परमार जी, ब्र० कु० बालुभाई तथा ब्र० कु० त्रिवेणी बहन बैठी हैं ←

रतलाम में जयन्त विटामिन्स फैक्ट्री में उद्योग शान्ति प्रदर्शनी में चीफ़ इन्जीनियर भ्राता खानवेलकर, प्रशासनिक अधिकारी भ्राता श्रीवास्तव जी ब्र० कु० कला बहन से चित्रों पर समझते हुए

दुर्ग (म० प्र०) में चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए जिला एवं सत्र न्यायाधीश भ्राता आर० डी० शुक्ल। ब्र० कु० विमल एवं अन्य ब्र० कु० भाई-बहनें शिव बाबा की याद में खड़े हैं

सीधी जिला में प्रदर्शनी के उद्घाटन के समय वहां के जिला एवं सत्र न्यायाधीश भ्राता ए० के० खरे एवं उनकी पत्नी तथा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट एम० ए० मिर्जा को चित्रों की व्याख्या देते हुए ब्र० कु० शैलम। साथ में ब्र० कु० दुर्गेश हैं

पारस सेवा केन्द्र द्वारा आयोजित चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए भ्राता रा० म० बागडेसाहब (सीनियर पावर हाउस सुपरिन्टेन्डेन्ट)। वेलफेयर आफ़िसर तथा ब्र० कु० रुकमणी, शकुन्तला तथा अन्य ब्र० कु० भाई-बहनें साथ में दिखाई दे रहे हैं

सतयुग और मर्यादा

ब्र० कु० रमेश, गामदेवी, बम्बई

सतयुग में इस सृष्टि पर जीवन व्यवहार व्यतीत करने वाले देवी-देवताओं का गायन है—१६ कला संपूर्ण, संपूर्ण निर्विकारी, मर्यादा पुरुषोत्तम, अहिंसा परमोधर्म देवी-देवता और यह गायन जन-समुदाय में काफी प्रचलित है । भक्तिमार्ग में श्री-रामचंद्र को मर्यादा-पुरुषोत्तम और श्रीकृष्ण को पूर्ण पुरुषोत्तम कहते हैं। १६ कला क्या हैं उसका ज्ञान सबको है, संपूर्ण निर्विकारी कौन है और वह स्थिति क्या है यह भी सब जानते हैं । परन्तु मर्यादा पुरुषोत्तम क्या है इस बात की विशेष जानकारी नहीं है। मर्यादाओं का यथार्थ रूप जानकार उसी मर्यादा में रहने वालों का जीवन पुरुषोत्तम अर्थात् श्रेष्ठ हो सकेगा।

ज्ञान का अर्थ है शक्ति और अशक्ति का ज्ञान। अशक्ति अर्थात् कमियां नहीं परन्तु क्या-क्या नहीं करना चाहिये उसका ज्ञान । धन, यह एक शक्ति है और उसी शक्ति से कई प्रकार की प्राप्तियां हो सकती हैं। परन्तु धन रूपी शक्ति की प्राप्ति के साथ उसका उपयोग कैसे-कैसे करना है और कौन-कौन सी बातों के लिये नहीं करना है इसका ज्ञान होना अति आवश्यक है। युधिष्ठिर आदि पांडवों ने धन आदि की मर्यादा तोड़ी और जुआ खेला तब तो महाभारत हुआ । महाभारत का मुख्य कारण ही है मर्यादाओं का उल्लंघन करना। आज, मर्यादाओं को तोड़ने के कारण, घर-घर में महाभारत हो रहा है। धन का उपयोग रूपी शक्ति का ज्ञान, तो उसी का दुरुपयोग रूपी मर्यादाओं का ज्ञान, और उन्हीं मर्यादाओं रूपी नियमों का पूर्ण पालन, बहुत जरूरी है। आज के वैज्ञानिक युग में मनुष्य को अनेक शक्तियों का ज्ञान है परन्तु उसके साथ जिन मर्यादाओं का पालन करना चाहिये अर्थात् दुःखदायी बातों में विज्ञान का प्रयोग नहीं होना चाहिये, इन्हीं मर्यादाओं रूपी लक्ष्मण-रेखाओं का पालन न होने के कारण ही आज विज्ञान विनाश के लिए निमित्त बन गया है।

इसी प्रकार सत्ता रूपी शक्ति की बात है। सत्ता यह शक्ति है। उसके कारण राम-राज्य भी बन सकता है तो रावण-राज्य भी बन सकता है । राम-राज्य अर्थात् सत्ता का सदुपयोग और रावण-राज्य अर्थात् सत्ता का दुरुपयोग। सत्ता का यथार्थ रूप से उपयोग न करने के कारण अनेक राजाओं को अपना राज्य-भाग्य छोड़ना पड़ा, जैसे कि ईरान के राजा ने राजगद्दी छोड़ी। भारत के इतिहास को संक्षिप्त में लिखने वाले कई लोग कहते हैं—मराठा गये नगारे (तमाशा आदि के कारण) मुगल गये तगारे (बहुत मकान, इमारतें आदि बनाने में धन का व्यय किया) और यह सरकार जायेगी पगारे (अर्थात् पगार (Pay) आदि बातों पर बहुत खर्च करना)। अंग्रेजी में कहावत है Power corrupts and absolute power corrupts absolutely अर्थात् सत्ता से भ्रष्टता आती है और संपूर्ण सत्ता से संपूर्ण भ्रष्टाचार पैदा होता है। भ्रष्टाचार का कारण ही है मर्यादाओं का तोड़ना। सत्ताधीश मर्यादा के बंधन को स्वीकार नहीं करता और भ्रष्टाचार को बढ़ाता है। इसी कारण (Dictatorship) अनन्य शासकता उत्पन्न होती है।

धर्म यह भी सत्ता है । समाज कल्याण की भावना से धर्म का आयोजन किया गया है। धर्म से मुक्ति और जीवनमुक्ति मिल सकती है इतनी सत्ता अर्थात् शक्ति धर्म में है । परन्तु धर्म की मर्यादा में

न रहने के कारण धर्मान्धता, अंधश्रद्धा आदि उत्पन्न होते हैं। धर्म के नाम पर हिंसक झगड़े और युद्ध आदि भी हुए हैं। अर्थात् धर्म की मर्यादाओं का पालन न होने के कारण रक्षक ही भक्षक बन जाता है—सुखदाता ही दुःख के निर्माण का निमित्त बनता है। ज्यादा से ज्यादा युद्ध धर्म के नाम पर हुए हैं कारण लोगों ने धर्म का यथार्थ अर्थ नहीं समझा और धर्म की मर्यादाएं तोड़ीं।

इस तरह धन, राज्यसत्ता, धर्म आदि शक्तियां सुखदायी भी हैं तथा उनकी मर्यादाओं का उल्लंघन करने से दुःखदायी भी बन जाती हैं।

सतयुग में धन, राज्यसत्ता और धर्म यह तीनों प्रमुख शक्तियां हैं। वहां देवताएं संपूर्ण हैं इसी कारण भावात्मक रीति से कहा गया है कि वे १६ कला संपूर्ण थे। परंतु संपूर्ण होते भी संपूर्णता के कारण आने वाली अनेक उपाधियां आदि नहीं हैं कारण तीनों के व्यय (Use) में मर्यादाएं हैं। इन मर्यादाओं का पालन करने के कारण वह समाज मर्यादा-पुरुषोत्तम का समाज है। जैसे नदी दो किनारों (Banks)के बीच में रहती है तो वह लोकमाता बनती है और यदि बाहर जाती है तो भयानक दुःख निर्माण करती है। बांध (Dam) आदि बंधन में नियमपूर्वक बहते रहने से बिजली आदि का निर्माण होता है। इसी तरह से सतयुग में समाज में सर्व प्रकार की मर्यादाओं का पालन होता है, उसी कारण वहां संपूर्ण सुख है। मर्यादाओं का संपूर्ण पालन होता है इसलिये दुख नहीं होता।

पहली बात शरीर की है। सतयुग में आयुष्य बहुत है जो कि आज की सृष्टि में नहीं है। धूम्रपान, शराब, तमोप्रधान भोजन, विकारी जीवन, तनाव आदि-आदि अनेक प्रकार की बातों के मापदंड के आधार पर देखा जाए तो क्या वर्तमान मनुष्य जीवन में शरीर के लिए आवश्यक आदर्श मर्यादाओं का पालन होता है? आज का मनुष्य जीवन माना ही सर्व प्रकार की मर्यादाओं का उल्लंघन करना। इसी कारण दवाइयां आदि कदम-कदम पर लेनी पड़ती है। रोग और मरीज़ों की संख्या बढ़ती जाती है।पांच तत्वों का बना हुआ शरीर सतयुग में भी होगा परन्तु वहां के बारे में बताया गया है कि विकार का नामनिशान नहीं होगा। आज के मनुष्य जीवन में है भोगबल, वहां है योगबल। और भोग के कारण ही अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। जीभ अर्थात् स्वाद के कारण परतंत्रता वश मनुष्य को कौन समझावे कि मर्यादाओं का पालन करो तो यही शरीर सर्वांग सुन्दर अर्थात् श्याम से सुन्दर बन जायेगा। अभी वर्तमान समय परमपिता परमात्मा हम आत्माओं द्वारा शरीर के लिये आवश्यक मर्यादाओं का पालन कराते हैं। भोजन वही है परन्तु योगयुक्त बना हुआ भोजन, शुद्ध पदार्थों का बना हुआ भोजन, और शुद्ध धन से उपार्जन किया हुआ भोजन।

उसी तरह निर्विकारी जीवन के कारण शक्ति क्षय भी बच जाता है। योगी जीवन के परिणाम स्वरूप तनाव आदि न होने के कारण मानसिक अशांति आदि बातें भी दूर हो जाती हैं। चिंता न होने के कारण फिकर से फारिग़ हो जाता है। कहते हैं खुशी जैसी खुराक नहीं तो अतींद्रिय सुख रूपी खुशी के कारण हर्षितमुख जीवन व्यवहार है। यह सभी मर्यादाएं, वर्तमान समय पालन करने के कारण भविष्य श्रेष्ठ प्रारब्ध सतयुग में मिलती है।

दूसरी बात है धन की, धन के बारे में अब तक झूठी मर्यादाओं का लोगों से पालन कराया गया। जैसे गलत दवाई के उपयोग से बीमारी बढ़ेगी उसी तरह से धन के बारे में गलत मर्यादाएं बनाई गईं। धन को माया समझ करके उससे दूर रहने को सिखाया। अभी हमें धन के बारे में सच्ची मर्यादाओं का ज्ञान मिला। धन यह माया नहीं परन्तु अधिकार-भाव यह माया है। इस अधिकार भाव के फलस्वरूप गरीब-अमीर जैसे वर्गभेद उत्पन्न हुए। धनवान अपना धन समर्पित करके प्रजापिता ब्रह्मा बने और अकिंचन ऊँ राधे समर्पित जीवन तथा धारणाओं को धारण कर मातेश्वरी बने और दोनों का सुमंगल मिलन अर्थात् श्रीलक्ष्मी श्रीनारायण का भविष्य

जीवन । इस तरह से धन की मर्यादाओं के पालन का प्रतीक है भविष्य के श्रीलक्ष्मीनारायण । इसी तरह से दूसरी मर्यादा है दान की । परमात्मा और उनके कार्य में प्रत्यक्ष (Direct) धन दान लगाने से क्या प्राप्ति होती है और अब तक उसी धन का अप्रत्यक्ष (Indirect) रूप से प्रभु कार्यों में लगाने से प्राप्ति में क्या फर्क होता यह भी बहुत गुह्य बात है । प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष (Direct and Indirect) रीति धन के उपयोग की मर्यादा यह बहुत बड़ी बात है और उसी के कारण प्राप्ति में भी जमीन आसमान का फर्क पड़ जाता है ।

एक धर्म और अनेक धर्म यह भी एक समझने योग्य बात है । अनेक धर्म के कारण तथा शरीर के आधार पर और धर्म-पिताओं द्वारा बनाये गये धर्म के कारण आज धर्मों द्वारा बनाई गई मर्यादाओं का पालन कोई नहीं करता । आत्मा का धर्म क्या है और उसकी धाराणाओं को पालन करने से, धर्म एक आध्यात्मिक शक्ति है, यह अब मालूम पड़ा है । धर्म अर्थात् धारणाओं का पालन, इस प्रकार धर्म शब्द की परिभाषा परमात्मा ने बताई । धारणा की पालना में अधिकांश मर्यादाओं का पालन है । इस तरह धर्म का सच्चा ज्ञान माना ही मर्यादाओं का सच्चा ज्ञान और उसी प्रकार का व्यवहार है । इन मर्यादाओं का पालन करेंगे तो व्यर्थ (Wastage) और टपकना (Leakages) नहीं होगा । जैसे पानी की टंकी में नल के द्वारा पानी आता है परन्तु यदि टंकी में छिद्र हों तो उनके द्वारा पानी बह जायगा और टंकी कभी भी पूरी भर नहीं सकेगी । ऐसे ही ज्ञान आराधना आदि के द्वारा जो भी शक्ति की कमाई होती है उसी शक्ति का मर्यादा विहीन व्यवहार के आधार पर नुकसान न हो । शक्ति की कमाई के साथ-साथ उसके अपव्यय को रोकना बहुत जरूरी है । यह अपव्यय, धर्म के द्वारा मिली हुई शिक्षा के आधार पर मर्यादायुक्त पालन के द्वारा, खतम होता है ।

परिवार में सुख-शांति के लिए मर्यादाओं का पालन बहुत जरूरी है । आज की दुनिया में बाप-बेटा, पति-पत्नी या अन्य सभी संबंधों में मर्यादा युक्त व्यवहार नहीं होता इसीलिये लग्न-विच्छेद (Divorce) आदि ज्यादा होते हैं । पश्चिम की दुनिया में लग्न एक संविदा (Contract) है परंतु यहां पर लग्न एक दो आत्माओं का मिलन है और उसी कारण वे सुख-दुख में साथी बनते हैं । इस साथी भाव के बदले विकारों का बंधन आने के कारण वहां पर जीवन में सभी मर्यादाओं का पालन नहीं होता, छोटे-बड़े भी आपस में उम्र के आधार पर जो एक दूसरे को आदर (Regard) और सम्मान (Respect) देना चाहिये वह नहीं देते इसीलिये परमपिता परमात्मा ने हम बच्चों को सिखाया है कि बड़ों को सम्मान और छोटों को प्यार दो, बोलने में मधुरवाणी हो इत्यादि की मर्यादा आदर्श जीवन के लिये आवश्यक हैं । इन मर्यादाओं का पालन यदि नहीं होगा तो कुटुंब के अंदर भी स्नेह और सुख नहीं होगा । महाभारत का मुख्य कारण यही है कि कौरवों और पांडवों ने आपस में कौटुंबिक मर्यादाओं का भंग किया और रामायण का मुख्य कारण कैकेयी ने कौटुंबिक मर्यादा अर्थात् बड़े पुत्र को ही राज्य मिल सकता है इस मर्यादा का भंग किया । राज्यसत्ता की भी अपनी मर्यादाएं हैं । इग्लैंड का राजा एडवर्ड आठवां (Adward VIII) को राजगद्दी का त्याग करना पड़ा क्योंकि वहां की मर्यादाओं के नियम अनुसार राजा एक विधवा स्त्री (Divorcee) के साथ शादी नहीं कर सकता और वर्तमान युवराज प्रिंस चार्ल्स (Prince Charles) के साथ डायेना स्पेंसर (Diana Spencer) की शादी इसीलिये हो सकी क्योंकि वह एक कन्या थी । पवित्रता की मर्यादाएं राजाओं को भी संभालना चाहिये, इस बात की गवाही इग्लैंड का इतिहास देता है । अमेरिका के प्रमुख चार्ल्स निक्सन (Charles Nixon) को भी प्रमुख पद का त्याग करना पड़ा क्योंकि उन्होंने मर्यादाओं का भंग किया । समाज अपने बड़ों के द्वारा सदा ही मर्यादापूर्वक व्यवहार हो ऐसी अपेक्षा रखता है और जो मर्यादाओं का

पालन करता है उनका सदा समाज में सम्मान होता है।

मर्यादाओं के पालन के बारे में परमात्मा कहते हैं कि कायदे में फायदे भी हैं। जितना-जितना इन मर्यादाओं के पालन की जड़ हमारे जीवन में मजबूत होगी उतना ही जीवन श्रेष्ठ होगा। दैवी-जीवन माना ही दैवी-मर्यादाओं का पालन, प्रातः 3½-4 बजे उठने से रात्रि सोने तक सभी मर्यादाओं का पालन करना, यह बहुत आवश्यक है। इस दैवी जीवन में बताए गए मर्यादाओं का पालन न करने से ही कई बहन-भाई अतीन्द्रिय सुख से वंचित हो जाते हैं और शिवबाबा का हाथ छोड़कर माया का हाथ पकड़ लेते हैं। सतयुग में यहां का ज्ञान नहीं है, ज्ञान की प्रारब्ध है परंतु मर्यादा के बारे में ऐसा नहीं कहा गया। यहां की मर्यादाएं जीवन व्यवहार बन जाती हैं और यही जीवन व्यवहार सतयुगी श्रेष्ठ समाज की नीव (foundation) बनता है सतयुग माना ही पुरुषोत्तम अर्थात् उत्तम मर्यादाओं में रहने वाले स्त्री पुरुषों का युग। इस युग में मर्यादाओं के आधार पर जीवन व्यवहार है इसीलिये कमाई में होने वाले व्यर्थ खर्च और कर्मों से उत्पन्न होने वाला घाटा नहीं होता।

आज की दुनिया में मर्यादाओं का पालन फैशन (Fashion) के आधार पर भी कई नहीं करते, फैशन आदि के कारण जीवन व्यवहार में कई प्रकार के खर्च का बोझ बढ़ जाता है और इसीलिये शिवबाबा ने सादगीपूर्ण जीवन व्यवहार का लक्ष्य दिया। सफेद वस्त्र यह हमारे वस्त्रों के बारे में बताये गये मर्यादाओं का प्रतीक है। आज के युवक और युवतियों के फैशन युक्त कपड़े अमर्यादायुक्त वस्त्रों का प्रतीक हैं। यही अमर्यादायुक्त कपड़े विकारों का निर्माण करते हैं और उसी कारण समाज में बलात्कार सदृश कई बातें होती हैं। आज के सिनेमा आदि भी मर्यादा आदि के पालन मे विघ्न रूप बनते हैं इसीलिये उसको सिन (Sin) की मां अर्थात पाप की मां कहा जाता है। पश्चिम की दुनिया के हिप्पी आदि के मुक्त व्यवहार भी इस तरह से विषय विकार की आग भड़काने वाले व्यवहार हैं।

अंत में यही बात स्पष्ट है कि शिव पिता परमात्मा नई सतयुगी सृष्टि में ज्ञान के द्वारा सुख का निर्माण और मर्यादाओं के पालन के द्वारा दुःख का उन्मूलन करते हैं और इन मर्यादाओं की लक्ष्मण रेखा की सीमा के अंदर सबको अपना संगमयुगी जीवन व्यतीत करने लिये कहते हैं। पवित्र बनो और योगी बनो यह स्लोगन, ईश्वरीय जीवन की मर्यादा क्या है वह सिखाता है, तो सभी मर्यादायुक्त जीवन व्यवहार करके नर से श्री नारायण वा नारी से श्री लक्ष्मी अर्थात् पुरुष से पुरुषोत्तम बने, यही भावना हर रोज मुरली के द्वारा हम बच्चों को मर्यादाओं के पालन की शिक्षायें मिलती हैं। इन मर्यादाओं के पालन की शिक्षाओं को हम जीवन में संपूर्णरूप से धारण करें यही आशा है।

(सौन्दर्य की परिभाषा पृष्ठ १२ का शेष)

गया। आत्मिक सौन्दर्य चिरस्थायी और शारीरिक सौन्दर्य···हुँ जो कभी सौन्दर्य की रानी थी; वह आज भिखारिन सी, बेरौनक सी. अधेड़ सी, हो कर आज ईश्वरीय दरबार में बिलख रही थी और शुचिता! वह···उसकी हम उम्र होकर भी उसके समक्ष कैसे कन्या जैसी छोटी लग रही थी। क्यों नहीं? आखिर थी भी तो कन्या ही न! तिस पर कितनी दिव्य। वरदानी मूर्त।

आज शुचिता की समझ में आया कि सौन्दर्य किसे कहते हैं? चिरस्थायी सौन्दर्य कौन सा है? सौन्दर्य की परिभाषा क्या है?

सत्य पर आधारित

सनातन धर्म के दो अन्यतम प्रतीक

सूर्य और विष्णु

ब्र० कु० रामऋषि शुक्ल

भारतीय इतिहास का क्रमबद्ध प्रामाणिक परिचय हम मौर्य-काल से पाते हैं। यद्यपि मौर्य सम्राटों का काल भी किसी प्रकार कम यशस्वी नहीं रहा है, किन्तु गुप्त वंश के काल को इतिहास-युग के 'स्वर्ण-काल' के रूप में मान्यता प्राप्त है।

विशेषतः गुप्त वंश के सम्राट सूर्य और विष्णु के उपासक रहे हैं। आज भी सनातन धर्मावलम्बी लोग अधिकांश रूप में सूर्य को किंवा विष्णु को अपना इष्ट अथवा उपास्य देव मानते हैं।

सूर्य अथवा सविता को परमदेव मानना उचित ही है, क्योंकि इनके बिना जीव-जगत की कल्पना ही नहीं की जा सकती। इसी प्रकार, विष्णु देव को भी परमश्रेष्ठ माना जाता है, क्योंकि विष्णु सुख-समृद्धि और ऐश्वर्य-विभव के अन्यतम प्रतीक हैं।

जगत के या सृष्टि के इस खेल में जीवन तो चाहिए ही—मानव और इतर प्राणी तो चाहिए ही। किन्तु साथ ही, जगत में जीवन को जीने के लिए सुख-समृद्धि तथा ऐश्वर्य-विभव भी तो चाहिए ही क्योंकि बिना इनके जीवन ही किस काम का; फिर तो वह निस्सार और निरर्थक हो जाय।

भारतीय वाङ्मय में सूर्य मात्र एक देव या परमदेव ही नहीं हैं, वरन् वह परमात्मा-के अस्तित्व का तथा उनके सदगुणों का प्रत्यक्ष बोध कराने वाले अन्यतम प्रतीक भी हैं। महामंत्र गायत्री में एक वचन आता है 'तत्सवितुर्वरेण्यं' और मनीषियों के कथनानुसार, हमारे इस दृश्यमान जगत के इस सूर्य या सविता को भी प्रकाशित करने वाले एक ज्ञान-सूर्य हैं और वह ज्ञान-सूर्य ही परमात्मा हैं अथवा शिव भगवान हैं।

ज्ञान-सूर्य परमात्मा को सर्वज्ञ और सर्वेश्वर के स्वरूप में अभिहित किया गया है और उनको समस्त सद्गुणों का अक्षय-अनन्त कोष या भण्डार भी कहा गया है। परमात्मा के इन शाश्वत सद्गुणों में पवित्रता, सुख, शांति, प्रेम, प्रकाश, आनन्द तथा मानव-सृष्टि विषयक ज्ञान प्रमुख हैं, और ऐसा माना जाता है कि जो मानवात्मा इस प्रत्यक्ष सूर्य के भी आलोकदाता उस ज्ञान-सूर्य परमात्मा की उपासना करेगा उसके मन-प्राण-हृदयादि में परमात्मा के पवित्रता- सुख- शांति-प्रेम-प्रकाश- आनन्द- सद्ज्ञान आदि सद्गुणों की धारणा तथा अवधारणा अवश्यमेव हो ही जायगी।

इसी प्रकार, विष्णु भी मात्र परमदेव ही नहीं हैं, वरन् वह स्वयं ज्ञान-सूर्य परमात्मा के अक्षय-अनन्त ऐश्वर्य-विभव के अन्यतम प्रतीक भी हैं। चतुर्भुज विष्णु के चारों अलंकार—शंख-चक्र-गदा-पद्म—वस्तुतः उन ऐश्वर्यों और उन विभूतियों के प्रतीक हैं जो मानवात्मा-विशेष में परमात्मा के श्रेष्ठ सद्गुणों की अवधारणा के बाद उसके जागतिक जीवन में प्रत्यक्षतः प्रतिफलित होते हैं और व्यक्ति-विशेष की काया को काया-कल्पतरु बना देते हैं।

संक्षेपतः (१)कमल पत्र युक्त कमल पुष्प न्यारापन का और प्यारापन का प्रतीक हैं। न्यारापन परम ऐश्वर्य है और प्यारापन परम विभूति है। (२) गदा का दण्ड सत्यमयता का तथा उससे सम्बद्ध गोलाकार चक्र धर्ममयता का प्रतीक हैं। सत्यमयता

ही परम ऐश्वर्य है और धर्ममयता ही परम विभूति है। (३) सुदर्शन चक्र 'स्व' के दर्शन किंवा आत्म-दर्शन की प्रज्ञामयता का और आत्म-दर्शन या आत्म-ज्ञान द्वारा परमात्मा के समग्र उद्घाटित ज्ञान की धारणा-मयता का प्रतीक हैं। परमात्मा का ज्ञान अर्थात स्वयं परमात्मा का सृष्टि-जगत के युग-चक्र का और युग-चक्र में समस्त मानवात्माओं के जन्म-चक्र का सम्पूर्ण एवं यथार्थ परिचय। इस सन्दर्भ में प्रज्ञामयता ही परम ऐश्वर्य है और परमात्मा के सत्य ज्ञान की धारणामयता ही परम विभूति है। (४) यथार्थ योगमयता परम प्राप्ति है जिससे जीवन सद्गुणों में प्रकाशित हो उठता है, यथार्थ यज्ञ-कर्म किंवा जीवन में यज्ञमयता परम विभूति है जिससे जीवन ईश्वरीय ऐश्वर्यों से सम्पन्न तथा भागवत विभूतियों से विभूषित हो उठता है और इस परमात्मा के प्रति समर्पणमयता से जीवन उनकी प्रत्यक्षता का माध्यम किंवा (प्रतीकात्मक अर्थ में) भागवत शंखध्वनि बन जाता है।

अन्ततः, सूर्य यदि परमात्मा के सद्गुणों के प्रतीक हैं तो विष्णु उनके ऐश्वर्यों एवं विभूतियों के प्रतीक हैं। यह सूर्य और यह विष्णु ही परमात्मा द्वारा संस्थापित आदि सनातन देवी-देवता धर्म के दो प्रमुख आधार-स्तम्भ हैं।

□

यहां क्या होता है ?

ब्र० कु० नारायण कोठारी, सांगानेर

यहाँ ज्ञान की गंगा बहती है।
परतें पापों की हटती हैं॥
नित रावण मारा जाता है।
बेहद की खुशियाँ बँटती हैं॥
बिजलियाँ चमकती हैं श्रीमत की।
सतसंग की बदलियाँ बरसती हैं॥
प्यार की घनघोर घटाओं से।
ज्ञानामृत की बूंदें गिरती हैं॥
जीतेजी यहाँ मरते हैं।
मरकरके फिर यहाँ जीते हैं॥
सच्चा कुंभ का मेला लगता यहाँ।
मधुबन की यादें भरते हैं।
दोस्त इस पावन मन्दिर में।
काँटों से कलियाँ बनते हैं॥

—०—

विश्व की सम्पूर्ण संस्कृतियों का मूल दैवी संस्कृति

ब्र० कु० आनन्द, जलन्धर

आज विश्व में जो इतिहास उपलब्ध है वह लगभग २५०० वर्ष तक ही प्रमाणिक माना जाता है। वैसे तो इस प्रथम २५०० वर्ष के तथा कथित प्रमाणिक इतिहास में भी अनेक काल बिन्दुओं पर विद्वानों में अनेक मतभेद हैं। विश्व में आज जो सभ्यताएं विद्यमान हैं वे भी लगभग इतना समय पुरानी ही हैं। इससे पूर्व की अर्थात् ई० पूर्व ५०० से पहले की सभी प्राचीन सभ्यताएं आज हमें भूमि के नीचे से खुदाइयां करके ही प्राप्त हो रही हैं। पुरातन मिश्र, बेबीलोनिया, सुमेरिया, क्रीट चीन एवं भारत की सिन्धु घाटी की सभ्यता के अवशेष मात्र ही उपलब्ध होते हैं। इस सम्बन्ध में विद्वानों को कोई सन्देह नहीं है कि इन्हीं पुरातन सभ्यताओं से ही आज सम्पूर्ण विश्व में मानव जाति का क्रमशः विस्तार हुआ है। इस तथ्य को भी लगभग सभी इतिहासविज्ञ स्वीकार करते हैं कि आज मिश्र, मेसोपोटामियां, रोम, यूनान इत्यादि में पाई जाने वाली परवर्ती सभ्यताएं अपनी मूल पूर्ववर्ती सभ्यताओं से तो बिल्कुल भिन्न हैं। परन्तु आर्य लोगों पर आर्येतर सभ्यता के प्रभावों को सभी विद्वान स्वीकार करते हैं। बहुधा इतिहासविज्ञों ने यह स्वीकार किया है कि विश्व में पाई जाने वाली सम्पूर्ण प्राचीन सभ्यताओं का मूल भारत ही था। इतिहासविज्ञों ने इस सम्बन्ध में बहुत प्रमाण प्रस्तुत किये हैं। इतिहास कांग्रेस के ग्वालियर अधिवेशन में (दिसम्बर १९५२) सभापति के पद से बोलते हुए डाक्टर राधा कुमुद मुकर्जी ने यह विचार व्यक्त किया था कि "मनुष्य भारत में ही उत्पन्न हुआ था। इसी देश में उसकी सभ्यता विकसित हुई, सिन्धु की तराई में कृषि सभ्यता का विकास हुआ तथा भारत की उसी प्राचीन सभ्यता के अवशेष सिन्धु के पठार में पाये जाते हैं। रामधारी सिंह दिनकर जी ने मुकर्जी की अभिव्यक्ति का समर्थन करते हुए निकट भविष्य में इसके प्रमाणित हो जाने की आशा व्यक्त की है।[1]

इस सम्बन्ध में अपना यह मन्तव्य है कि मुकर्जी ने सिन्धु की तराई से प्राप्त अवशेषों के आधार से भारत में मानव के विकास-क्रम की मान्यता को जोड़ने की जो कोशिश की है वह उनके विकासवाद में विश्वास मात्र का प्रमाण है। वस्तुतः प्राचीन दैवी सभ्यता अपनी परवर्ती आर्य सभ्यता से श्रेष्ठ एवं उच्च थी।

धर्म ग्रंथों एवं दर्शन दृष्टिकोण में समानताएं

विश्व के प्राचीन धर्म ग्रन्थों में पाई जाने वाली अनेक समानताएं उनके परस्पर सम्बन्ध की ओर संकेत करती हैं। बाईबल के पुराने एहदनामा में सृष्टि की उत्पत्ति एवं नूह के सैलाब की घटनाओं के वर्णन वैदिक बाङ्मय की पौराणिक गाथाओं से मेल खाते हैं। छन्दोग्य उपनिषद में भी जलप्लावन का वैसा ही वर्णन है जैसा कि पुराने एहदनामा में नूह के सैलाब का। अन्तर केवल यही है कि एक में हज़रत नूह का नाम है तो दूसरे में वेवस्वत मनु का। जिन्दे अवेस्ता में बहुत स्थानों पर आर्य शब्द है। इसी भान्ति ईरानियों की तो मातृभूमि ही भारत कहलाती थी। तथा ईरान का तो पुराना नाम भी आर्य स्थान माना जाता है। अवेस्ता में आहुरमज्दा शब्द वेदों के असुरमेधा का ही अपभ्रंश है। इसी तरह यूनानी सभ्यता में भी महाकवि होमर का काव्य इलियड बाल्मीकी रामायण ही का रूपान्तर है। हेरोडोटस, यूसोवियस, जेनोफेन्स, अरिष्टोफेन इत्यादि यूनानी दार्शनिकों के विचार भारतीय दर्शन चिन्तना

१. संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ १७

से बहुत अधिक मिलते जुलते हैं।

मिश्र के प्राचीन देवी-देवता तो वैदिक सभ्यता के ही अनुसार थे। यूनानी विचारकों का जिनमें प्लेटो, सोलन, पैथागोरस, फिलोस्ट्रेटस आदि प्रमुख हैं, यही मत है कि मिश्र का धर्म भारतीय पद्धतियों पर आधारित था। मेसोपोटामियां के चाल्डी साहित्य के कुछ ग्रंथों में जो बहुत प्राचीन माने जाते हैं उपासना तथा प्रार्थना की पद्धतियों के शब्द ऋग्वेद के अपभ्रंश माने जाते हैं। यहीं पर असीरियन सभ्यता का विकास भी भारतीय सभ्यता के अनुसार ही हुआ। सुप्रसिद्ध अमेरिकन विद्वान डाक्टर सेपियर का विश्वास है कि "प्रशान्त महासागर के दोनों ओर के सुदूर तटों की भाषा में इतनी समानता है कि जिस कारण कह सकते हैं कि प्राचीन काल में भारतीय और चीनी लोग स्थल मार्ग से भ्रमण करते हुए कैनेडा होकर अमेरिका पहुंचे और अमेरिका के मूल निवासियों ने उनसे सभ्यता में दीक्षा ली" इतिहासविज्ञों का विचार है कि रोम में जो चिन्तन शैली प्राचीन लोगों को प्राकृतिक शक्तियों और देवी-देवताओं की उपासना करने के लिये प्रेरित करती थी उसका आज के रोमन लोगों के लिये कोई महत्त्व नहीं रहा।

निस्संदेह विश्व की सभी प्राचीन सभ्यताओं में पाए जाने वाली ये असंख्य समानताएं उस एक प्राचीन सभ्यता की विद्यमानता थी और दृढ़ता पूर्वक संकेत कर रही है जो ही उनका मातृ रूप थी।

सर्व जातियों एवं भाषाओं के उद्गम का मूल भारत

आर्येतर सभ्यता को आर्य, दस्यु, द्राविड़, सुमेरियन, असुर क्या कहें इस विषय पर विद्वानों में असमंजसता है। कालान्तर में जलवायु के प्रभाव तथा विवाह आदि के कारण परस्पर रक्त मिश्रण से यह समस्या और भी अधिक जटिल बन गई है। मानव विज्ञान (Anthropology) एवं भाषा विज्ञान (Philology) इत्यादि के विभिन्न दृष्टिकोणों से देखने पर इस समस्या का कुछ हल मिलता है। मानव विज्ञान की पहली कसौटी त्वचा के रंग की है। मानव अथवा जन-वैज्ञानिकों का एक साधारण विश्वास है कि गोरे रंग के लोग आर्य वंश के हैं। कुछेक के विचार में आर्येतर का रंग पक्का काला था। इन्हीं दोनों के मिश्रण से अलग रंगों के लोग उत्पन्न हो गए। विश्व में पाए जाने वाले तीनों प्रमुख रंगों के लोग कोकेसियन (गोरे रंग के) मंगोलियन (पीले रंग के) इथोपियन (काले रंग के) भारत में अपना प्रतिनिधित्व रखते हैं। इस प्रकार मुकर्जी के शब्दों में "रंगों की दृष्टि से भी भारतीय मानवता विश्व मानवता का अद्भुत प्रतीक मानी जा सकती है।"

मानव विज्ञान की दृष्टि से जातियों के विभाजन का दूसरा दृष्टिकोण उनकी मुखमुद्रा शारीरिक संगठन एवं ऊंचाई के अनुसार है। इस दृष्टिकोण से भी भारत में चार प्रकारों के लोग मिलते हैं। पहले वे जिनका कद छोटा, रंग काला, नाक चौड़ी, और बाल घुंघराले हैं। इस जाति के लोग जंगलों में अक्सर रहते हैं। और आर्यों तथा द्रविड़ों से पूर्व जंगलों में जाकर बसे माने जाते हैं। दूसरी तरह के लोग जिनका कद छोटा, रंग काला, मस्तक लम्बा, बाल घने, नाक खड़ी और चौड़ी होती है। रंग एवं कद में ये आदिवासी लोगों से थोड़ी समानता रखते हैं। बिन्ध्याचल के नीचे सारे दक्षिण भारत में इन्हीं लोगों की प्रधानता है। इन्हें द्रविड़ जाति के कहा गया है। तीसरी जाति के लोगों का कद लम्बा, वर्ण गेहुंआ या गोरा, दाढ़ी मूछ घनी, मस्तक लम्बा, नाक पतली और नुकीली होती है। ये आर्य जाति के लोग हैं। दिनकर जी के अनुसार "आरम्भिक आर्यों के जिस रंग-रूप का वर्णन पुराने साहित्य में मिलता है वह अब बहुत बदल गया है। शायद जलवायु में उष्णता आ जाने से रंग काला पड़ गया है। द्राविड़ों एवं आदिवासियों के साथ वैवाहिक मिश्रण से भी ऐसी सम्भावनाएं मानी गई है।"

चौथे प्रकार के लोगों का मस्तक चौड़ा, रंग काला पीला, आकृति चिपटी और नाक चौड़ी और

पसरी हुई होती है। इनके चेहरे पर दाढ़ी-मूछ भी कम उगती है। ये मंगोल जाति के लोग माने जाते हैं। ये बर्मा, आसाम, भूटान, नेपाल तथा उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, बंगाल, काश्मीर के उत्तरी किनारे पर पाये जाते हैं। ये लोग भारत में जब आर्यों की सभ्यता स्थिर हो चुकी थी तब चीन एवं तिब्बत से आये माने जाते हैं। इण्डो ऐशियन कलचर' (अप्रैल १९५४) में प्रकाशित अपने एक निबन्ध में डा० सुनीति कुमार चटर्जी ने अनुमान लगाया है कि मंगोल लोग आर्यों से पूर्व भारत में बस चुके थे तथा उनकी जाति का नाम किरात था जिसका वैदिक साहित्य में वर्णन आता है।

तुलनात्मक भाषा-विज्ञान की दृष्टि से

इस प्रकार विश्व में पाई जाने वाली मुख्यत: सभी जातियों के लोग भारत में है। तुलनात्मक भाषा-विज्ञान के दृष्टिकोण से भी विद्वानों का यह विचार है कि प्राय: समस्त यूरोप के लोग उसी परिवार से निकले हैं जिस परिवार के भारतवासी आर्य थे। सुप्रसिद्ध भाषातत्वज्ञ डाक्टर सुनीति कुमार चटर्जी ने लिखा है कि "भारतीय जनता की रचना जिन लोगों से हुई है वे मुख्यत: तीन भाषाओं में बांटे जा सकते हैं। औष्ट्रिक, अथवा आग्नेय, द्राविड़ और हिन्द यूरपीय (हिन्द जर्मन) नीग्रो से लेकर आर्य तक जो भी लोग इस देश में आए उनकी भाषाएं इन भाषाओं के भीतर समाई हुई हैं।" जयचन्द्र विद्यालंकार ने इस सम्बन्ध में अपने विचार यूं व्यक्त किये हैं कि "भारतवर्ष की जनता मुख्यत: आर्य और द्राविड़ नसलों की बनी हुई है। उसमें थोड़ी सी छोंक शबर और किरात (मुंड़ और तिब्बत-बर्मा) लोगों की है।" निष्कर्ष निकालते हुए डाक्टर रामधारी सिंह ने कहा है "सच तो यह है कि रक्त, भाषा, और संस्कृति सभी दृष्टियों से भारत की जनता अनेक मिश्रणों से युक्त है।[२] अर्थात् ये कहें कि विश्व की सम्पूर्ण विविधता का मूल इस में ही निहित है।

आर्येतर काल में सर्वत्र सुन्दरता का राज्य था

ऊपरलिखित चर्चा का प्रयोजन यही है कि भारत में आर्यों के समय से ही द्राविड़ एवं आग्नेय जातियों के लोगों का पाया जाना प्रमाणित है परन्तु इन मुख्य जातियों का मूल भी एक ही जाति प्रमाणित होती है। इन सभी का धर्म संस्कार, भाव-विचार एवं जीवन के प्रति दृष्टिकोण एक समान ही है। बाद में आने वाले शैव शाक्त, वैष्णव, जैन और बौद्ध धर्म के लोग इनमें से ही थे। इस सम्बन्ध में अपना यही मन्तव्य है कि प्राचीन दैवी सभ्यता के समय काल में मुख्यत: गोरे वर्ण के काकेसाइड जैसे सुन्दर मुख-मुद्रा वाले लोग भारत में थे। परन्तु जब दैवी सभ्यता का आलोप हुआ तो कुछ लोगों ने तो पुनः नगर तथा गांव सभ्यता अपना ली। परन्तु कुछ को असहाय होकर जंगलों में भी जाकर आश्रय लेना पड़ा। वे जंगली वातावरण से आदिवासी रूप धारण कर गए। जिनसे ही आग्नेय जाति का प्रादुर्भाव हुआ। जलवायु के प्रभाव भूमध्य रेखा की निकटता एवं नगर सभ्यता से अलग-अलग हो जाने के कारण रहन-सहन का ढंग निकृष्ट होता चला जाने के कारण इनका रूप रंग बिगड़ता तथा बदलता गया। कालान्तर में इनसे अनेक जातियां उत्पन्न हुईं। निस्संदेह आर्येतर काल में मनुष्यों के संस्कार, स्वभाव, स्वरूप एवं स्वास्थ्य अपनी सर्वोत्कृष्ट अवस्था में था। आर्येतर काल में भी समाज में कुछ निम्नकार्य करने वाले जैसे चांडाल, आदि लोग भी थे। उनका रहन-सहन अलग था। बौद्धकाल में भी चांडालों की बस्ती और उनकी स्वतन्त्र भाषा के जीवित होने के प्रमाण मिलते हैं। उतरी भारत में द्राविड़ भाषाओं के प्रभाव का कोई प्रमाण न पाकर कुछ इतिहास विज्ञों का विचार है कि ये पश्चिमी एशिया से भारत में आए। एक प्रसिद्ध इतिहास-विज्ञ के अनुसार "द्रविड़ों का भारत में आगमन ई०

२. संस्कृति के चार अध्याय पृष्ठ २२

पूव ५०० में हुआ होगा।"[३] इससे यही स्पष्ट होता है कि आग्नेय एवं द्राविड़ जाति के लोग आर्येतर काल में भारत में नहीं थे।

निष्कर्षतया यह तथ्य प्रमाणित होता है कि दैवी सभ्यता (आर्येतर काल) के समय में जातियों में ऐसी कोई भिन्नता न थी जिस प्रकार की कालान्तर में उत्पन्न हो गई।

इस विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भाषा, रंग-रूप, जाति, सभ्यता और संस्कृति की दृष्टि से आर्येतर काल में लगभग समानता सी थी। अर्थात् सर्वत्र सुन्दरता का राज्य था। जलवायु एवं भौगोलिक विभिन्नताओं के कारण रंग रूप एवं शारीरिक संगठन में कुछ अन्तर कालान्तर में आते चले गए होगें। इसकी सम्भावना अस्वीकार नहीं की जाती। वृन्दावन दास जी इस तथ्य को इन शब्दों में स्वीकारते हैं "जो भी हो, हिन्दू जाति वही है जो यहां के मूल-निवासियों और आर्यों के मिश्रण से बनी। शक, हूण, यवन, कुशाल, आदि भी पीछे बड़ी संख्या में हिन्दू जाति में प्रविष्ट हो गए।"[४] इस प्रकार यह स्वीकार किया जा सकता है कि वर्तमान संस्कृति का मूल आर्य संस्कृति एवं आर्यों का मूल आर्येतर संस्कृति ही थी।

ऐतिहासिक सामग्री के स्त्रोत

२५०० वर्ष पूर्व के इतिहास को ढूंढने के लिये कोई पूर्णतया प्रमाणिक सामग्री इस समय विश्व के इतिहासविज्ञों के पास नहीं है। जो कुछ अधिक से अधिक है वे इन प्राचीन सभ्यताओं के अवशेष मात्र है। जिनमें कुछ मुद्राएं, मूर्तियां, अभिलेख, भग्न इमारतें एवं पुस्तकें हैं। इनमें से भी सबसे अधिक सामग्री प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में ही उपलब्ध है। जिनमें ऋग्वेद, बाईबल का प्राचीन भाग (ओल्ड टेस्टामेंट) एवं चीन का ताओ मार्ग प्रमुख है। इसके अतिरिक्त भारत में प्राचीन इतिहास पर जो थोड़ी रोशनी डालते हैं वे हैं वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, सूत्र, उपनिषद, पुराण, महाभारत एवं रामायण इत्यादि शास्त्र इन्हें ही प्राचीन इतिहास की सामग्री का स्रोत माना जाता है। परन्तु आज उपलब्ध इन पुस्तकों में पूर्ण प्राचीन साहित्य का एक अंश मात्र है। क्योंकि भारत में मुस्लिम राज्य के अन्तर्गत लगभग सभी धार्मिक एवं ऐतिहासिक पुस्तकें नष्ट कर दी गई थी। इस सम्बन्ध में श्री राम देव जी ने अपनी पुस्तक 'भारतवर्ष का इतिहास' में लिखा है कि "ऐसी घटनाएं कितनी हुईं इसका पता कौन लगा सकता है? वर्तमान संस्कृत ग्रंथों में अनेक ऐसे ग्रंथों के नाम आते हैं जिनका इस समय कहीं भी पता नहीं लगता। इसका कारण क्या? यही कि अनेक भारतीय ग्रंथ मुसलमानी ईर्ष्या अग्नि में भस्म हो गए। जब आर्य जाति पर विपत्ति पड़ी तो उसके नेताओं ने सोचा कि इतिहासादि साधारण ग्रंथ तो फिर बन सकते हैं, परन्तु यदि वेदों उपनिषदों, तथा दर्शनादि शास्त्रों का नाश हो गया तो न केवल आर्य जाति ही नष्ट हो जायेगी प्रत्युत संसार मात्र की आत्मिक, मानसिक तथा सामाजिक उन्नति में बाधा पड़ेगी। अतएव वे वेद, उपनिषद, दर्शन आदि कतिपय ग्रंथों को कंठस्थ करने लगे, जिससे आर्यों के सैकड़ों ग्रंथ बच गए। परन्तु सहस्त्रों परम उपयोगी ग्रंथों की रक्षा नहीं हो सकी। वेदों की प्रायः एक सहस्र शाखाओं का नाश हो गया। धनुर्वेद, आयुर्वेद, शिल्प विद्या, इतिहास आदि सैकड़ों ग्रंथ विलुप्त हो गए।"[५]

इस प्रकार अभी जिस सामग्री से भारत के इतिहास का निर्माण होता है वह कालान्तर की अनेक परिस्थितियों से गुजरने के पश्चात् हमारे सम्मुख उपलब्ध है। इन परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप उन ग्रंथों की मौलिकता कितनी शेष रह गई

३ इण्डोएशियन कलचर (जनवरी १९५४) में प्रकाशित किस्ताफ वौन फुएरर हेमैन्ट्रोर्फ का निबन्ध

४ देखिए "प्राचीन भारत में हिन्दू राज्य" पृष्ठ ३५

५ देखिए भारतवर्ष का इतिहास द्वितीय खण्ड प्रथम भाग पृष्ठ १०

हागी। इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता।

कुछ ऐतिहासिक तथ्य

जिन प्राचीन ग्रंथों को इतिहास का प्रमाण माना जाता है, उसमें इतनी अधिक अतिशयोक्ति एवं संख्यातीत-सा वर्णन है कि इतिहासविज्ञ उन्हें पूर्णतया प्रमाणिक नहीं मानते। बहुधा वर्णन में प्रतीकात्मक अथवा लक्षणात्मक शैली एवं रूपकों का आलम्बन लिया गया है। घटनाओं का कालक्रम एवं क्रममयता भी बहुत समय तक जनश्रुतियों एवं किंवदन्तियों के आधार पर ही आधारित रहने के कारण प्राण शून्य-सी हो गई है। इन ग्रंथों में जो कुछ जिस रूप में है उसमें से ही ढूंढ़ने पर इतिहास की जो रूपरेखा बनती है, उसे इतिहासविज्ञों ने अपनी-अपनी दृष्टि से बनाया है। पौराणिक ग्रंथों के आधार पर कुछ विद्वानों ने प्राचीन इतिहास की रूपरेखा कुछ इस प्रकार एकत्रित की है। जिस पर विचार करना है।

विश्व के सम्पूर्ण काल को पुराणों में १४ मन्वन्तरों में विभक्त किया गया है। एक मन्वन्तर में ७१ चतुर्युगियां मानी गई हैं। एक चतुर्युग की आयु १२००० वर्ष मानी गई है परन्तु इन्हें दिव्य वर्ष माना गया है तथा एक दिव्य वर्ष की गणना ३६० वर्षों के बराबर मानी जाती है। इस अनुसार चतुर्युग की आयु ४३२०,००० वर्ष बन जाती है। इस पर टीका करते हुए मिश्रबन्धुओं ने लिखा है कि "चतुर्युग की आयु १२००० वर्ष होती तो यह गणना अच्छी थी किन्तु पौराणिक पंडितों ने इस काल को देवताओं का वर्ष कह कर बहुत बढ़ा दिया है।—इसलिये यह पौराणिक समय संख्या बिल्कुल बेकार हो गई है।"[५] सूर्य पुराण में कलियुग की दी गई १२०० वर्ष की आयु का चार गुणा करके यदि चतुर्युग की आयु मानी जाये तो अधिक संगत है। सतयुग में धर्म चारपाद, त्रेता में तीन पाद, द्वापर में दो पाद, तथा कलयुग में एक पाद तो होगा ही परन्तु युगों की आयु समान ही रहती है। कुलसन्धियां आदि का समय मिलाकर चतुर्युग ५००० वर्ष का मानना अधिक ऐतिहासिक एवं संगत लगता है। इस विषय पर विशद वर्णन जगदीश चन्द्र द्वारा रचित विश्व का भविष्य में मिलता है।

१४ मनवन्तरों में से ७ हो चुके माने जाते हैं। मनवन्तरों को इतनी लम्बी आयु का वर्णन स्वतः ही अप्रमाणिक जान पड़ता है। दूसरी तरफ़ पौराणिक आधार से प्रथम ६ मन्वन्तरों का कुल कालक्रम लगभग २५०० वर्ष माना गया है। सर्वप्रथम मनु का नाम स्वायम्भुवमनु था। उसके उपरान्त क्रमशः स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रेवत, चाक्षुष, वेवस्वत् है। इसी भान्ति आगे १४ तक उनके नाम गिनाए गए हैं। स्वायम्भुव मनु पहले राजा माने गए हैं।

इनसे वेवस्तमनु का काल २२०० वर्ष बाद का माना गया है। अर्थात् चाक्षुण मन्वन्तर तक पहले ६ मन्वन्तर इतने ही काल में समाप्त हो गए। यह बात पुराणों में वर्णित राज वंशों की वंशावलियों के वर्णन से भी पुष्ट हो जाती है। ऋग्वेद का निर्माण चाक्षुष मन्वन्तर से ही आरम्भ हुआ माना गया है। चाक्षुष से पहले वेद तथा उनके मन्त्रों की कोई चर्चा नहीं है। बाल गंगाधर तिलक का मत है कि आर्य लोग वेद निर्माण से कम से कम २००० वर्ष पहले भारत में थे।

इस सम्बन्ध में विचार भेद समाप्त हो जाता है यदि तिलक जी का इशारा आर्यों से पूर्व की सभ्यता की तरफ हो जिन्हें ही ऋग्वेद से बीस-पच्चीस सौ वर्ष पहले का भारत में विद्यमान होना इतिहासविज्ञ भी स्वीकार करते हैं। इसलिये यदि आर्यों से पूर्व की आर्येतर सभ्यता का कालान्तर स्वायम्भवमनू से लेकर वेवस्वत मनू तक रखे तो दैवी सभ्यता का समयकाल २५०० वर्ष सिद्ध हो जाता है।

इस सम्बन्ध में एक असमजंसता तब आकर खड़ी होती है जब हम पहले जलप्लावन का सम्बन्ध वेवस्वत मनु से जोड़ देते हैं। वस्तुतः प्रथम जलप्लावन स्वायम्भुवमनु से पूर्व हुआ है। तथा दूसरा जलप्ला-

५ देखिए भारतवर्ष का इतिहास (मिश्र बन्धु) अध्याय ७

वन उसके लगभग २५०० वर्ष बाद वेवस्वतमन् के समय काल में हुआ होगा। जनश्रुतियों एवं लोक कथाओं के रूप में घटनाओं का इतिहास जीवित रहा। इस कारण जब कालान्तर में पुराण लेखनी बद्ध किए गए तो इनमें अनेक त्रुटियों का आ जाना सम्भव ही था। इतिहास की कुछेक घटनाओं को पौराणिक ग्रंथों में रमणीक ऐतिहासिक गाथाओं का रूप दे दिया गया है जिसका मुख्य कारण बहुत समय इनका श्रुतियों के रूप में ही विद्यमान रहना था। □

—:०:—

कभी नहीं

ब्र० कु० राजकुमारी, शालीमार बाग, देहली

ए माया ! तू क्या समझे ?
हम तुमसे डर जायेंगे !
पीछे कभी भी हट जायेंगे !
नहीं ! कभी नहीं !
हमारे पास गदा है ज्ञान की
और सीट हमारी स्वमान की
जा ! तेरी तरफ न देखेंगे हम,
ज्ञान रत्नों से सदा खेलेंगे हम,
हम बाबा की छत्रछाया के तले;
ए माया तू क्या समझे ?
हम तुमसे डर जायेंगे ?
पीछे कभी भी हट जायेंगे ।
नहीं ! कभी नहीं !
क्या तू संकल्प बन के आएगी ?
हुं ! पानी में लकीर सम मिट जाएगी ।
क्या तू अपना पाम्प शो दिखाएगी ?
क्षणभंगुर, हैं बस ! यही टाइटिल पाएगी ।
परिस्थिति का भी गर रूप हो तेरा,
स्वस्थिति तोड़ देगी मुंह तेरा,
क्या पता नहीं तुझे ?
सिकीलिधे हम ! बाबा की गोद में पले,
ए माया तू क्या समझे ?
हम तुमसे डर जायेंगे !
पीछे कभी भी हट जायेंगे ?
नहीं ! कभी नहीं !
देख कर्मातीत बनने का हमारा लक्ष है,
बस ! परमधाम हमारा कक्ष हैं,
मुरली का सहारा हमें नित-नित,
न भाएगी कभी, तेरी बित-बित,
हम कर्ण ! कवच कुण्डल लाए हैं साथ,
न कोई याचक रख सके उस पे हाथ,
क्योंकि हम चलते सदा फरिश्ते बन के,
ए माया ! तू क्या समझे ?
हम तुमसे डर जायेंगे ?
नहीं ! कभी नहीं !
जब बुद्धि हो शान्त, औ हो एकान्त,
बाबा की हो याद, औ हो सेवा की तात,
पंछी बन उड़ेंगे तो न रहेगा तनाव
न भाव, न स्वभाव, न टकराव,
तो फिर बनेंगे माला के मणके ।
ए माया ! तू क्या समझे ?

—:०:—

"एक रस अवस्था में रहने की युक्तियां"
"प्रफुल्लित कैसे रहें ?

—ब्र० कु० शीला, काठमाण्डो (नेपाल)

जो विघ्न हम हटा सकते हैं वह हटा देने चाहिएं, जो हटा नहीं सकते उनके लिए क्या करना चाहिए ?

दुखी होने से विघ्न कम नहीं हो जाते : दुखी होने में तो अपनी ही हानि है। तब !

"जो जाता नहीं सवारा, वो जाए सहारा"

इसलिए प्रसन्नचित्त होकर सहन करना चाहिए। वीर मनुष्यों की यही रीत है।

यह सृष्टि हार-जीत का एक खेल है। खेल तो सदा प्रसन्नता और आमोद-प्रमोद के लिए होता है। यह भी तो तुम जानते हो कि खेल में हार भी होती है तो जीत भी होती है। तब दुखी क्यों होते हो ? खेल के राज़ को भूलना ही तो अज्ञान है। ज्ञान इसमें है कि साखी होकर इस खेल को देखकर हर्षित होते हों। आमोद ही के विचार से ठीक प्रकार खेल खेलो यानी कर्म करो—ज्ञानीजन ऐसा ही कहते हैं। इस दृष्टि से जीवन सुखमय है। इसके बिना जीवन नर्क है। मृत्यु के तुल्य है। मृत्यु अथवा अभिशाप तो कोई भी नहीं चाहता। तब दुखी क्यों हुआ जाए। क्यों न हर्षित हृदय रहा जाए। यही विचारधारा अथवा दृष्टिकोण युक्तियुक्त है एकरस अवस्था में रहने का !

यदि विनाशी और परिवर्तनीय वस्तुओं में मन लगा रहेगा तो मन की अवस्था में अवश्य ही परिवर्तन आएगा। एकरस अवस्था तो तब ही हो सकती है जब कि मन एकरस पदार्थ में लगा रहे। सदा एक रस तो एक मात्र अजन्मा, अमर परमात्मा ही है। मनुष्यों अथवा संसार की जड़ पदार्थों में बुद्धियोग भटकने से अवस्था स्थिर और एकरस कभी भी नहीं हो सकती। इस लिए उस अविनाशी पिता से योग लगाओ। उस परमात्मापिता को छोड़कर तुम्हारा मन कभी भी ठौर नहीं पा सकता और स्थायी सुख शान्ति की प्राप्ति का तुम्हारा कोई भी उपाय सफल नहीं हो सकता। दुःख का अनुभव तब होता है जब मनुष्य में हर्ष-शोक, निन्दा स्तुति, मान-अपमान आदि का भाव हो। यह याद रहे कि अन्तरमुखी को कभी दुःख का अनुभव हो नहीं सकता। परन्तु मनुष्य अन्तरमुखी तब हो सकता है जब वह अपनी वृत्तियों को देह और देह के सम्बन्धियों, व्यक्तियों से समेट लेता है। यदि खुशी का अनुभव चाहते हो तो देही का ज्ञान प्राप्त कर देही निश्चय में स्थित हो जाओ। इस बात की चनौती है कि बिना परमात्मा की याद के कभी भी जीवन में अतीन्द्रिय सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती। आज संसार में वैभव होते हुए भी लोग दुःखी क्यों हैं ? क्योंकि उन्हें आत्मा-परमात्मा का ज्ञान ही नहीं है।

यदि तुम्हारा मन कभी अशान्त होने लगता है या कभी तुम ऐसा अनुभव करते हो कि तुम से कुछ खो गया है तो समझ लो कि तुमने अभी मन से पूर्ण संन्यास नहीं किया। अभी तुम्हारे मन में इतना प्रेम जाग्रत नहीं हुआ जितना कि एक सच्चा आशिक का अपने आशुक से होता है। मन आनन्द की एकरस (सच्ची) अवस्था में उतने समय रहता है जितना समय तुमने अपना दिल उस परमात्मा दिलबर को दिया है। जब तुम दिल को वहां से हटाते हो तभी अशान्त माया आ जाती है। क्योंकि दिल की एक विशेषता है कि वह कभी खाली नहीं रहता। दिल परमात्मा को देना ही योग है और एक

रस परमात्मा से सच्ची एकरस स्थिति प्राप्त करना है। एकरस अवस्था का न रहना ही सिद्ध करता है कि तुम्हारा मन किसी जगह पर अटका हुआ है। अब प्रश्न उठता है कि प्रभु के साथ मन पूर्ण रीति से कैसे लगे? उसके प्रति हृदय में भरपूर प्रेम कैसे जागे? विषयों और व्यक्तियों से मन का पूर्ण संन्यास कैसे हो?

इस गुह्य रहस्य को समझने के लिए अपने वर्तमान जीवन पर विचार करो और अपने से पूछो कि मेरा मन सभी व्यक्तियों व पदार्थों पर एक-सा लगता है? उत्तर मिलेगा नहीं। इसका कारण क्या है? आप कहेंगे कि मन को जहां से अधिक से अधिक सुख शान्ति प्राप्त होती है वहाँ दौड़ता है भले ही वह सुख क्षणिक हो और बाद में दुःख का ही कारण बनता हो। बस इसी उत्तर में ही तुम्हारी समस्या का समाधान छुपा है। तुम्हारा मन सांसारिक तमो-प्रधान व्यक्तियों का संन्यास नहीं करता। क्योंकि तुम समझते हो कि इनसे तुम्हें रस आता है। तुम्हारा मन प्रभु में नहीं लगता। यदि तुम्हें ज्ञान द्वारा पूरा निश्चय हो जाए कि प्रभु ही मुक्तिजीवन, मुक्ति का दाता है तो कभी भी दुःख का लेशमात्र भी नहीं आएगा।

विघ्न तो अपने ही विकर्मों का फल समझना चाहिए। कर्म का फल तो अवश्य मिलना ही है तब घबराहट किस बात की? उसको प्रसन्नतापूर्वक सहन करना चाहिए। इससे क्लेश टल-सा जाता है। इससे शारीरिक व्याधि अथवा अन्य विघ्न हलके से हो जाते हैं। अब जो विघ्न आया वह आया ही इस लिए है कि पश्चात आध्यात्मिक अवस्था में प्रगति होनी है क्योंकि कलियुग के अन्त में ज्ञान प्राप्त करने वाले की चढ़ती कला है। अब जो हो चुका उसकी चिन्ता न करके आगे उन्नति के लिए प्रयत्न करना चाहिए। क्योंकि प्रगति भी पुरुषार्थ के बिना अपने आप तो तुम्हारे पास नहीं चली आएगी।

"मत रंज कर ऐ दिल तू,
गर अब यह काली रात है।
फिर वही दिन आएगा,
दो चार पल की बात है।" □

चरित्र निर्माण आध्यात्मिक मेला एवं राजयोग शिविर

शक्तिनगर, दिल्ली सेवा-केन्द्र की ओर से तिकोनापार्क शक्ति नगर में २८ मार्च से ८ अप्रैल तक "चरित्र निर्माण आध्यात्मिक मेला" तथा 'राज-योग शिविर' का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश भ्राता ए० एन० सेन ने किया। इस अवसर पर माऊँट आबू से राजयोगिनी दीदी मनमोहिनी जी, (मुख्य सह-प्रशासिका) भी विशेष तौर पर पधारी थीं तथा "शिव परमात्मा" के ध्वजारोहरण का कार्यक्रम उनके कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। शहर के प्रमुख भागों से एक विशाल शोभा यात्रा भी निकाली गई थी जिसमें एक हजार से भी अधिक सफेद वस्त्रधारी ब्रह्माकुमार एवं ब्रह्माकुमारियों ने भाग लिया तथा दो शिक्षाप्रद एवं आकर्षक झाँकियाँ भी ट्रक एवं ट्राली पर सजाई गई थीं। हजारों फोल्डर, निमन्त्रणकार्ड व पर्चे भी जनता में बाँटे गये तथा मुख्य चौराहों पर बैनर्स, गेटस व पोस्टर भी लगाये गये थे। सभी स्थानीय समाचार पत्रों में भी इस कार्यक्रम की सूचना व समाचार प्रकाशित हुआ। इन सबके परिणाम स्वरूप अनेकानेक आत्माओं को ईश्वरीय सन्देश मिला तथा लगभग २०००० लोगों ने मेला देखा व २०० ने राजयोग शिविरों तथा ज्ञान शिविरों में भाग लिया जिनमें से २५ नये भाई-बहन सेवा केन्द्र पर नियमित रूप से क्लास में आ रहे हैं।

□

जय गीता माता !

ब्र० कु० रामऋषि, शुक्ल, लखनऊ

शिव त्रिमूर्ति की अमृत वाणी सब को सुखदाता ।
जय गीता माता !

कल्प-कल्प मां ! ज्ञान-सूर्य को प्रकट तुम्हीं करतीं
कल्प अज्ञान-तिमिर को संसृति से हरतीं
तुमसे ही विज्ञान-ज्ञान का परिचय जग पाता ।
जय गीता माता ! ओ, गीता माता !

मानवता के आदि पिता के भ्रम हरने वाली
आत्म-ज्योति से मनु के मन को ओ, भरने वाली
महाप्रलय के परिवर्तन में संकट से त्राता ।
ओ, गीता माता ! जय गीता माता !

तुम से ही तो आदि पिता को दिव्य बुद्धि मिलती
नयी सृष्टि की नव-रचना हित आत्म-शुद्धि मिलती
तुमसे ब्रह्मा-भागीरथ को परमात्मा पाता ।
ओ, गीता माता ! जय गीता माता !

परमात्मा के महावाक्य ! ओ, ईश्वर की वाणी !
वेद-शास्त्र का सार-तत्व तुम कितनी कल्याणी !
परमात्मा शिव ब्रह्मा-मुख से ही तुम को गाता ।
ओ, गीता माता ! जय गीता माता !

नयी सृष्टि के आदि काल की बेला जब आयी
शिव त्रिमूर्ति ने ब्रह्मा-मुख से तब गीता गायी
वही मूल गीता का दर्शन हम सब को भाता ।
ओ, गीता माता ! जय गीता माता !

शिव बाबा को ब्रह्मा-तन में तुम लाने वाली
ब्रह्मा-मुख से सत्यज्ञान को बतलाने वाली
ज्ञान तुम्हारा ब्राह्मण-कुल में अमृत बरसाता ।
ओ, गीता माता ! जय गीता माता !

तुमको साथ लिये भारत में आते परमात्मा
धारण करती पहले तुमको ब्रह्मा की आत्मा !
ब्रह्मा ही सो कृष्ण—राजपद सतयुग में पाता ।
जय गीता माता ! ओ, गीता माता ! *

*यह गीत 'ऊँ जय जगदीश हरे !' के अति प्रसिद्ध गीत की धुन पर विरचित और निर्मित है।

कुछ अटपटी, खटपटी और चटपटी बातें

ब्र० कु० अशोक, विज्ञान भवन, आबू

हनुमान ने सूर्य को पकड़कर कांख में दबा लिया—यह अटपटी सी बात सुनाकर शास्त्रों से श्रद्धा समाप्त होने लगती है। ऐसी अनेक अटपटी और मन के लिए चटपटी और आपसी खटपटी की बातों से पुराण भरे पड़े हैं। पुराणों में इन सबके सिवाय और कुछ भी नहीं है। बहुत से व्याख्यान ऐसे हैं जिन पर थोड़ा भी समझदार व्यक्ति विश्वास नहीं कर सकता। तब भला इन पुराणों के लेखक कितने समझदार होंगे! या सचमुच ही नारायणी नशे में झूम कर उन्होंने ये बातें लिख डालीं। उन्होंने अपने इष्टों की महिमा करते-करते अतिशयोक्ति की भी हद कर दी व उचित-अनुचित का जरा भी ध्यान नहीं रखा।

महाभारत युद्ध के दौरान वीरों ने जो हाथी उठाकर आसमान में फेंक दिये थे, वे वहीं लटके रह गये—वे अन्तरिक्ष में पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के परे कहां रुक गये, आज तक किसी ने भी उनकी खोज नहीं की। ये रोमांचक अटपटे वृत्तांत मनुष्य को यह सोचने के लिए बाध्य कर देते हैं कि आखिर इन लेखकों ने मनुष्यों को क्या सिखाने के लिए ऐसा लिखा।

वास्तव में ये तो उन योगियों की उच्चतम स्थिति के प्रतीक हैं जिनके पैर तो सदा धरती पर ही रहते हैं परन्तु बुद्धि योग सदा ही ऊपर परमधाम निवासी परमात्मा पर एकाग्र रहता है। सूर्य को कांख में छुपाने का भाव भी ज्ञान-सूर्य परमात्मा के सम्पूर्ण ज्ञान को स्वयं में समा लेना है।

इन्द्र जी राक्षस के भय से कमल में जा छुपे थे। लेखकों ने देवताओं को सदा ही लड़ते दिखाया, दूसरों की तपस्या भंग करते दिखाया, काम-भोगों से कभी भी तृप्त न होते दिखा दिया है। देवलोक में भी सदा ही खिटपिट, देवताओं की कौन सी श्रेष्ठता का प्रतीक है। एक ओर भारत में देवी-देवताओं के प्रति अत्यन्त श्रद्धा प्रदर्शित की जाती है। उनके सुन्दर मन्दिर बनाकर उनका पूजन किया जाता है। पतित व्यक्ति को उन्हें छूने का भी अधिकार नहीं होता—यह उनकी पवित्रता का प्रतीक है। परन्तु दूसरी ओर उन्हें चरित्रहीन, स्वार्थी, भोगी, क्रोधी दिखाना—क्या अपने ही धर्म की खुद ग्लानि करना नहीं है? अगर कोई दूसरा व्यक्ति किसी देवता की ग्लानि कर दे, तो भक्त उसे जिन्दा ही खा जाने को तैयार हो जाते हैं। तो जो मनुष्य खुद ही अपने पूज्य की ग्लानि करे, उसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए।

शास्त्रों के गन्दे आख्यान मनुष्यों को किस श्रेष्ठ चरित्र की प्रेरणा देते हैं, या उनके आत्म-विश्वास को नष्ट कर डालते हैं। इन्हें पढ़कर मनुष्य की कामुक वृत्ति तीव्र होती हैं या शान्त। फिर भला इनमें व आजकल के गन्दे साहित्य में क्या अन्तर रह जाता है और क्यों हम इन्हें धार्मिक पुस्तक कह कर धर्म के उच्च भाल को झुकाते हैं। धर्मशास्त्रों में तो ऐसे धर्मात्माओं के आख्यान होने चाहिए जिन्हें पढ़कर मनुष्य धर्मात्मा बन सकें। इसमें सन्देह नहीं कि पुराणों में ऐसी श्रेष्ठ, प्रेरणादायक कहानियां भी हैं। परन्तु कलियुग के कामुक मनुष्यों को आकर्षित करने के लिए ही शायद लेखकों ने इस प्रकार के वृतांतों का सहारा लिया होगा।

एक ओर उपनिषदों में वर्णित संन्यास लक्षणों

पर ध्यान दें—दूसरी ओर पुराणों में वर्णित कहानियों पर। स्पष्ट हो जाएगा कि एक संन्यासी को पुराण पढ़ने भी नहीं चाहिए। नहीं तो वे संन्यासी स्वयं को पवित्र बना नहीं सकेंगे। पुराणों की ये चटपटी बातें जिसमें ऋषियों को पतित होते दिखा दिया—अपने पूर्वजों की साक्षात् ग्लानि है। जिनके पूर्वज ही ऐसे थे, उनकी सन्तान कैसी होगी !

रामायण को देखिये—जिस धनुष को सीता रोज बायें हाथ से उठाकर झाड़ू लगाया करती थी, उसे रावण सहस्र राजाओं सहित मिलकर भी न उठा सका। तब सीता तो रावण से बलवान हुई। फिर अकेला रावण सीता को कैसे उठाकर ले गया ! और देखिये लेखक ने राजकुमारी सीता को झाड़ू लगाते दिखा दिया। कितनी यथार्थ हैं ये बातें—पाठक स्वयं विचार कर सकते हैं ! शास्त्रों की ये मन को मोहने वाली बातें सुन-सुन कर भक्त झूम उठते हैं और वाह-वाह करते रहते हैं। परन्तु उनका मन स्थायी रूप से खुशियों के झूले में नहीं झूलता।

युगों की आयु लाखों वर्ष व कल्प की आयु अरबों वर्ष दिखाकर इन्होंने मनुष्य को गहरी नींद में सुला दिया। इनसे कोई इतने समय का हिसाब मांगे या इतिहास पूछे तो ये खुदा के बन्दे मौन खड़े रह जाते हैं। इन्होंने चारों युगों में भी कोई भेद नहीं छोड़ा। सतयुग में धर्म के ४ चरण दिखाकर भी वहां अधर्म का बढ़ावा दिखा दिया। कोई स्पष्ट सिद्धान्त इन पुराणवादियों के पास नहीं है।

वर्तमान पुरुषोत्तम संगम युग पर हमने भगवान के मुख से सृष्टि की सत्य कहानी सुनी। देवताओं की यथार्थता को समझा। मन को रस देने वाले गुह्य ज्ञान को जाना और फलस्वरूप अपने जीवन को श्रेष्ठ बनाकर स्थायी सुख-शान्ति को प्राप्त करते जा रहे हैं। □□

(समस्याएं एवं निराकरण पृष्ठ 44 का शेष)

का सामान्य तत्व है। वर्तमान समय हम देखते हैं कि आज फिर वही धर्म की ग्लानि का समय चल रहा है, जबकि मनुष्य का व सारे संसार का उत्थान के बजाय पतन ही हो रहा है।

अतः परमपिता परमात्मा जो गीताज्ञान दे रहे हैं वह बहुत ही सहज, सरल व मधुर है। परमात्मा द्वारा दिये जा रहे गीता ज्ञान के उज्ज्वल दर्पण में ही मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप का दर्शन करके अपने भीतर की दूषित भावनाओं तथा विषय-वासनाओं को परिवर्तित करके अपने में दैवी संस्कारों की जागृति कर सकते हैं। गीता ज्ञान द्वारा ही मनुष्य अपने संकुचित दृष्टिकोण को बदल सकता है। दुखों से निवृत हो सकता है। काल के पंजे से छूट जाता है। अतः हम यह कह सकते हैं कि सत्य गीता ज्ञान को श्रवण करने व उसे प्रेक्टिकल रूप में धारण करने से ही सर्व समस्याओं का समाधान हो सकता है और समस्याओं के समाधान हो जाने से ही मनुष्य फिर आध्यात्मिक पुरुषार्थ में तीव्रता ला सकता है। मुक्ति व जीवनमुक्ति के अधिकार को प्राप्त कर देव-पद को प्राप्त कर सकता है।

अतः वर्तमान विश्व की घिनौनी परिस्थितियों को, समस्याओं के जाल को समाप्त करके उसमें पुनः एकता व शांति के सुन्दर स्वप्नों को साकार करने के लिए आज आवश्यकता है—परमात्मा द्वारा दिये जा रहे सत्य गीता ज्ञान की। आज गीता ज्ञान के दिव्य मंत्र को उन लोगों के कानों में फूंकना है जो विशाल गगनचुंबी अट्टालिकाओं में बैठे कागजी प्रस्तावों द्वारा विश्व की समस्याओं का समाधान करने का प्रयास कर रहे हैं। आज आवश्यकता है गीता ज्ञान रूपी अमृत की तेज वर्षा की, जिससे समस्त विश्व की मनुष्य आत्माओं का विकार रूपी विष धुल जाये। देह अभिमान का आवरण भस्मीभूत हो जाये तथा प्रत्येक मानव अपने सभी भेदभाव के जाल को तोड़कर समस्त मानवता में अपनत्व के दर्शन कर सके।

□

शिवसागर में 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी' लगाई गयी। सिविल सर्जन जगन्नाथ बरुआ जी उद्घाटन कर रहे हैं। ब्र० कु० रजनी व ब्र० कु० उषा खड़ी हैं

बलसाड में राजयोग प्रदर्शनी का उद्घाटन यहां के जिला धीश मृदुला बहन कर रही हैं साथ में ब्र० कु० लता, ब्र० कु० रक्षा बहन खड़ी हैं

मोगा में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन महावीर दल के चेयरमैन भ्राता घनश्याम जी कर रहे हैं। साथ में ब्र० कु० संजीवन जी खड़ी हैं

उज्जैन में प्रदर्शनी का उद्घाटन मेजर भ्राता डा० ओ० पी० श्रीवास्तवा कर रहे हैं। साथ में ब्र० कु० रुकमणी, ब्र० कु० प्रभा व शंकर भाई खड़े हैं

कालेज स्क्वायर (कटक) सेवा केन्द्र की ओर से "बडबिल" में आयोजित प्रदर्शनी के समाप्ति समारोह पर भ्रा० वीरेन्द्र कुमार जी, बहन पद्मा जी। साथ में ब्र० कु० कुलदीप, ब्र० कु० मंजु, ब्र० कु० तिवारी जी चित्र में दिखाई दे रहे हैं

सेवा

ब्र० कु० भारत भूषण, करनाल

सेवा का विषय अति आवश्यक कैसे ?

हमारी इस ईश्वरीय विद्या के चार विषय हैं—ज्ञान, योग, धारणा एवं सेवा। जिनमें से सेवा का विषय एक बहुत महत्त्वपूर्ण विषय है, जिसका सम्पूर्ण अवस्था प्राप्त करने में एक बहुत बड़ा योग-दान है। कई पुरुषार्थी समझ लेते हैं कि योग में ही बस कुछ आ जाता है, क्या जरूरत है सेवा के लिए भाग-दौड़ करने की। योग ही बड़ी से बड़ी सेवा है, लेकिन फिर भी ज़रा हमें ध्यान से समझना चाहिए कि यह तो एक विषय हुआ, फिर बाबा ने चार विषय ही क्यों बताए हैं। विद्यार्थी को सम्पूर्ण पास होने के लिए हर विषय में १००% अंक लेने ज़रूरी हैं। ब्रह्मा बाप के जीवन में भी सदैव सेवा नज़र आती थी। कभी भी स्वयं प्रति पुरुषार्थीस्वरूप नहीं बल्कि तन मन धन सहित विश्व की सेवा में अर्पणस्वरूप और आखिर सम्पूर्णता के बाद वह आत्मा बन ही सेवा स्वरूप गई ! वैसे भी जग में जयजयकार उसी की होती है जो दूसरों के काम आता है। चुनाव में भी ज्यादा भलाई करने वाले को ही चुना जाता है। इसी प्रकार बापदादा के साकार महावाक्यों में बाबा ने कहा है कि तुम बच्चों को पवित्र आत्मा एवम् पुण्यात्मा बनना है। पवित्र बनेंगे योगाग्नि से, पुण्यात्मा बनेंगे सेवा से !

सेवा क्या है ? सच्ची निष्काम सेवा क्या है ?

सेवा की परिभाषा है "दूसरों को लाभ कराने की इच्छा" अथवा दूसरे शब्दों में "शुभ भावना एवम् शुभ कामना" ही सेवा है। सेवा अर्थात् दूसरे को उठाने की इच्छा ! इसी सेवा को ही परहित, परोपकार आदि भी कहा जाता है। अभी सेवा को भी ज्ञान के हिसाब से स्थूल सेवा एवम् सूक्ष्म सेवा दो भागों में विभाजित किया जाता है। स्थूल सेवा में कर्मणा सेवा आती है। सूक्ष्म सेवा में मनसा एवम् वाचा की सेवाए आती हैं। लेकिन एक तरीके से देखें तो स्थूल सेवा भी सूक्ष्म सेवा ही है। वो भी आत्माओं को सुख पहुंचाने के भाव से ही की जाती है। कई पुरुषार्थी स्थूल सेवा में रुचि नहीं रखते और सूक्ष्म सेवा बड़े शौक से करते हैं। यह भी एक बहुत बड़ी भूल है जो सेवा में भेद समझते हैं। स्थूल को भी बड़ी से बड़ी सेवा एवम् सूक्ष्म सेवा समझनी चाहिए ! ऐसे पुरुषार्थी स्थूल सेवा सच्चे दिल से नहीं करते हैं बल्कि समझते हैं यह तो ढीले पुरुषार्थियों का काम है। सच्चे निष्काम सेवाधारी ऐसा कभी नहीं कह सकते हैं। क्योंकि सच्ची निष्काम सेवा अर्थात् अपने प्रति कोई इच्छा नहीं लेकिन जिसमें दूसरी आत्माओं का कल्याण हो उसके लिए चाहे मुझे बरतन मांजने पड़ें, चाहे मुझे कितनी भी शारीरिक मेहनत करनी पड़े मुझे तो केवल सेवा की ही इच्छा है ! इसको कहते हैं सच्चा निष्काम सेवाधारी ! सच्चा निष्काम सेवाधारी अर्थात् स्वयं को पद वा गद्दी पाने की इच्छा नहीं बल्कि अनेकों को पद दिलाने की इच्छा वाला ! स्वयं विश्व महाराजन बनने के साथ-साथ अनेकों को विश्व महाराजन बनाना है, यह है सच्ची निष्काम सेवा ! इसलिए अपने आपको यह चैक करने के लिए कि मैं सच्चा निष्काम सेवाधारी हूं या नहीं, इस बात से चैक करो कि मुझे हर समय दूसरों को सेवा का चान्स देने की इच्छा है या स्वयं लेने की। स्वयं को प्रत्यक्ष एवम् सिद्ध करते हैं अथवा बाप-दादा को प्रत्यक्ष अथवा सिद्ध करते हैं !

सेवा का आधार

सेवा का सबसे मुख्य आधार है आत्म-अभिमानी होना। क्योंकि बाबा कहते हैं बच्चे यह रूहानी सेवा है, रूहानी सेवा अर्थात् सेवा करते वक्त स्वयं भी रूह

बन जाओ एवम् रूहें ही सामने देखो जिनको सुख पहुंचाने की इच्छा है। शुभ भावनाएं एवम शुभ कामनाएं अथवा रहम की भावना भी तभी आ सकती है जब आत्माओं की अति दुर्गति की अवस्था देखोगे, जब उनको विकारों की अग्नि में जलता देखोगे और स्वयं को बाबा की गोद में भाग्यशाली अनुभव करोगे। आज तक कोई ऐसा भाई नहीं देखा जो अपने भाइयों को आग लगते हुए चुपचाप चैन से देखता रहे, वह उन्हें बचाने के लिए हर भरसक प्रयत्न करेगा। तो कहते हमारी सेवा में दिल नहीं लगती, वो समझ लेवें हमारे अन्दर भाई-भाई की दृष्टि की बहुत बड़ी कमी है। हमारे सगे भाइयों का सत्यानाश हो रहा है; हम उन्हें बचा भी सकते हैं तो क्यों न हमें दिन-रात लग जाना चाहिए।

सेवा में सफलता कैसे हो—

अगर हम निम्नलिखित बातों पर ध्यान देते हुए सेवा करें तो यह गैरन्टी है हम बड़े-बड़े पत्थरबुद्धियों को पारसबुद्धि बनाने में सहज ही सफल हो जाएंगे।

1. अहम् भाव का त्याग—

यह ज्ञान तो हम सब जानते हैं कि भक्ति का फल देने वाला भगवान है, तो कभी भी हमें यह नहीं आना चाहिए कि हमने इसे ज्ञान दिया, यह मैंने किया। कई बार देखा जाता है कि कई पुरुषार्थी जब सेवा समाचार सुनाते हैं कि हमने यह सेन्टर खोला, इसको मैंने ज्ञान दिया। फिर मैंने यहां सेवा की। साथ में यह भी कहते रहेंगे "हम तो निमित्त हैं, करने वाला तो बाबा है" जब तुम हो निमित्त तो एक-एक को सुनाने की इच्छा ही क्यों होती है, हम तो निमित्त हैं करने वाला जो है वो ही सुनाए या फिर जब उसकी आज्ञा हो तब सुनाओ। अगर सेवा करते समय आप निमित्तपन के पाठ को पक्का धारण कर लें अर्थात् मैं नहीं कर रहा, मुझसे बाबा करा रहे हैं अथवा स्वयं बाबा मुझ द्वारा कर रहे हैं तो यह अनुभव करके देखें कि इतनी सफल सेवा होगी जो आगे कैसी भी आत्मा हो एक सेकेन्ड में आपकी मूर्त द्वारा ही सन्तुष्ट हो जाएगी। आपके बोल उन्हें वरदान अनुभव होंगे। बाबा की सेवा में सबसे बड़ा विघ्न आज यही अहम् भाव ही है। जब ज्ञान सुनाते या सेवा करते तो बार-बार चेक करो कि मैं स्वयं की प्रत्यक्षता कर रहा हूं वा बाप की प्रत्यक्षता कर रहा हूं।

वहम् भाव का त्याग—

सेवा में असफलता का कारण सबसे मुख्य यह भी है कि हम जिन आत्माओं की सेवा करते हैं उनके प्रति वहम् भाव पैदा कर लेते हैं। जब कभी भी प्रदर्शनी लगाते हैं तो जो ग्रुप आता है उन्हें हम अन्दर में यह समझकर कि यह मूर्ख गांव के लोग हैं अथवा आधुनिक कालेज के लड़के हैं उन्होंने क्या ज्ञान को समझना है, इन्हें तो बस चित्र दिखा दो। इसको कहते हैं वहम् भाव ! सदैव समझो बाबा ने जो आत्मा मेरे सामने लाई, मेरे साथ सम्बन्ध जोड़ा है वे जरूर विशेष आत्मायें हैं, दूसरा बाबा के महावाक्य याद रखो कि 'होपलेस केस की जास्ती प्राईज मिलती है।' तो वहम् भाव खत्म होने से आत्माओं की ग्रहण शक्ति बढ़ती है। इसी प्रकार घर में प्रवृत्ति में रहने वाले भाई बहनें अगर घर को भी आश्रम समझें एवम् लौकिक सम्बन्धियों को दैवी भाई बहन की दृष्टि से देखें और उसी तरीके से व्यवहार करें तो उनमें अवश्य परिवर्तन आएगा।

(3) **रहम भाव की धारणा—**

सेवा का अर्थ ही है रहम भाव ! सेवा करते समय अपने से पूछना चाहिए कि मैं जिगरी रहमदिल बना हूं। रहम से भरे बोल अनेकों की बुद्धि का ताला खोल देते हैं। रहम भाव से भरी दृष्टि, वृत्ति में इतनी शक्ति है कि वह विरोधी अथवा दुश्मन को मित्र बना देती है। पत्थर को पानी बना देती है।

(4) **त्याग तपस्या—**

सेवा में असफलता अर्थात् त्याग तपस्या में कमी। नहीं तो बाबा का वरदान हम बच्चों को मिला है

कि सफलता तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है ! त्याग भी अब कई प्रकार का है—मानशान का त्याग एवम् स्थूल त्यागो एक दो को देखकर किया त्याग, त्याग नहीं कहलाता बल्कि सच्चा त्याग स्वयं के निश्चय पर आधारित होता है । महात्याग की परिभाषा बापदादा देते हुए कहते "ऐसा त्याग जिसमें यह भी भाव न आए मैंने त्याग किया । इसलिए कभी भी कोई प्रोग्राम करते तो उसको सफल बनाने की बापदादा से एवम् सर्व आत्माओं से पहले से ही Planning बनाओ फिर Plan और Practical एक करने के लिए पूरी तपस्या करो तो फिर देखेंगे सफलता हुई पड़ी है ।"

5. **परखने की शक्ति**—

सेवा के लिए अष्ट शक्तियों में से परखने की शक्ति की अत्यन्त आवश्कयता है । बाबा इसके लिए मिसाल भी देते हैं हकीम का, जो नब्ज देखते ही बीमारी बता देता था और फिर उसकी उचित दवा देता । इसी प्रकार सेवा में अगर सम्मुख आई हुई आत्मा की इच्छा पता करलें तो सहज ही उन्हें संतुष्ट कर सकते हैं । जैसे कि पानी के प्यासे को 36 प्रकार के भोजन दो तो भी उसे पानी की महत्ता उस समय उनसे अधिक है । इसी प्रकार शान्ति के भिखारी को शान्ति, ज्ञान के भिखारी को ज्ञान देना है । अब प्रश्न उठता है यह परखने की शक्ति आये कैसे ? इसके लिए जितना आप इस शक्ति को प्रयोग करोगे उतना बढ़ेगी । दूसरे निराकारी अवस्था और जब क्लीयर कनैक्शन होगा तो यह शक्ति एकदम से आ जाएगी ।

6. **अमृतवेला**—

सर्विस में सफलता पाने का सबसे सहज साधन अमृतवेला है जो आपकी मेहनत को आधा से भी कम कर देता है । अमृतवेले सवेरे-सवेरे उठ बापदादा के प्यार में लवलीन बन, स्वयं को खजाने से भरपूर बनाए फिर आत्माओं को प्रत्यक्ष कर शुभ भावना, रहम भावना से उन्हें प्राप्ति का अनुभव कराओ तो उनकी सहज और सफल सेवा कर सकेंगे, इतना तक कि जिसकी आत्मा की सर्विस करते हो उसे भी अमृतवेले का महत्व बताए बैठने को कहो तो सेवा में काफी सफलता होगी ।

7. **परिवार से कनैक्शन**—

जब भी नए जिज्ञासुओं की सेवा करते हो तो उसमें विशेष बात यह ध्यान देने योग्य है कि श्रेष्ठ सेवा के लिए जितनी श्रेष्ठ आत्माओं से कनैक्शन जुड़वायेंगे उतनी अच्छी सेवा कर सकेंगे । कई आत्माएं सेवा तो बहुत अच्छी करतो लेकिन भूल यह हो जाती कि वे उन्हें अपनी हद तक रखती हैं । यह सोचकर कि यह मेरी ही प्रजा बने और कोई उसका अधिकारी न बने । यह तो एक महाभूल है । बल्कि सोचना यह चाहिए कि जितनी आत्माएं भाग्य बनायेंगी, यह भाग्य बनाने के निमित्त भी जो बना है जिसने चांस दिया, उसी को तो पुण्य मिलेगा । इसलिए परिवार से कनैक्शन, ममा बाबा के चरित्र सुनाएं तो उसका जल्दी ही उद्धार हो जाएगा । स्वयं शिव बाबा के महाकाव्य हैं जब ममा बाबा कहा तो वारिस बना ।

8. **मधुबन से कनैक्शन**—

सर्विस की सफलता के लिए आने वाली आत्माओं का जितना शीघ्र हो सके "मधुवन स्वर्गाश्रम" ले जाना चाहिए । बड़े ते बड़े कुम्भकरणों को जगाने की यह सहज ते सहज विधि है । उन्हें मधुवन की महिमा खूब सुनाओ और उत्सुकता पैदा करो । एक बार जीवन में यह भी सर्वोत्तम तीर्थ यात्रा करो । जितना जल्दी हो सके उन्हें मधुवन योग-शिविर करने भेजें ।

९. **लौकिक दुःख सुख में साथी**—

अनुभवों के द्वारा यह जाना गया है कि यह भी एक सेवा श्रेष्ठ ते श्रेष्ठ साधन है । कभी भी जिन आत्माओं की आप सेवा करते हो तो जब उन्हें शारीरिक तकलीफ होती है तो उसके दुःख में साथी

बन जाओ। एक बार का अनुभव किसी आत्मा को शारीरिक तकलीफ होने के कारण, मैं थोड़ा फ्रूट लेकर गया और योगस्थिति में उसको थोड़ी सेवा की। तो मैंने देखा वो जो कभी सेन्टर पर नहीं आता था वो लगातार एक मास अमृतवेले की क्लास में आता रहा। भूल किन्हीं कारणों से वो कहीं और चला गया। लेकिन इतने परिवर्तन का कारण उसे यह दिखाई दिया कि यह तो स चमुच हमारे सच्चे सेवा-धारी हैं। किसी भी संस्कार स्वभाव टक्क र खाने वाली, न बदलने वाली आत्मा इस आपकी सच्ची सेवा से बदल जाएगी।

10. सम्पर्क की बजाए सम्बन्ध जोड़ो—

जहाँ सम्पर्क होता है वहां से टूट सकता है लेकिन जहां सम्बन्ध अथवा रिश्ता होता है वहां से टूटना नामुमकिन है। इसलिए यह नहीं कि केवल कोर्स कराया और छोड़ दिया बल्कि उसके लौकिक व्यक्तिगत जीवन के बारे में पूछ कर सम्बन्ध भी जोड़िए। लेकिन यह सब कुछ करना हैरूहानियत में स्थित होकर। साथ ही साथ यह लक्ष्य रखकर सुनना है कि इसमें लौकिक को मुझे अलौकिक बनाना है। सम्बन्ध जोड़ना अर्थात् लौकिक घर जाकर उसे अलौकिक आश्रम में बदलना। इस प्रकार जितना ब्राह्मण परिवार का सम्बन्धी बनेगा उतना पुरानी दुनिया के सम्बन्ध स्वत: ढीले पड़ जायेंगे।

11. कच्चा फल—

सफल सेवा के लिए विशेष यह बात ध्यान में रखनी होती है कि कभी भी कच्चा फल नहीं खाना है। कच्चा फल खाते ही त्याग तपस्या खत्म हो जाती। परिणामस्वरूप सेवा रुक जाती है। कच्चा फल खाना अर्थात् जैसे कई बार कोई जिज्ञासु सात, दस पन्द्रह दिन लगातार आ जाए तो सभी को खुशी होती है और बिना उसकी सेवा किए ही उसके निश्चय की महिमा औरों के सामने करने लग जाते अथवा उससे सेवा की कामना अथवा कुछ उससे और फायदे की सोचने लग जाते, इससे वास्तव में जितनी हमने सेवा की होती उस पर पानी फेर देते। इसलिए सदैव दाता बनना है। कभी संकल्प में भी मंगता नहीं बनना।

12. अन्तर्मुखी हो सेवा करना—

अभी सीजन में एक अव्यक्त वाणी बापदादा ने "अन्तर्मुखी बनने" पर चलाई है। और बतलाया कि अन्तर्मुखी ही मास्टर सर्व गुणों का सागर बन सकता। इस पर एक वत्स ने बापदादा से कहा कि बाबा सेवा में आवाज में आना पड़ता है। फिर बाप दादा ने उत्तर दिया "सेवा भल करो, सेवा तो अक्षर ही अच्छा है। लेकिन अन्तर्मुखी होकर करो।" अभी आप वन्डर खायेंगे, वाचा द्वारा सेवा करते हुए भी अन्तर्मुखी कैसे? इसका अर्थ यह है कि अन्तर्मुखी अर्थात् मुख अन्दर की ओर। अर्थात् जब आप अपने को आत्मा समझकर और स्वयं को ही समझा रहे होंगे अथवा अनुभव करा रहे होंगे और जिसकी सेवा कर रहे हैं उसका ध्यान नहीं होगा। तो कहेंगे आपने अन्तर्मुखी होकर वाचा सेवा की। ऐसी सेवा की रिजल्ट "अति उत्तम निकलती है।

इस प्रकार उपर्लिखित सभी प्वाइंटस को ध्यान में रखते हुए हम कोई प्रकार की सेवा करेंगे तो सफलता अवश्य मिलेगी।

'आबू अब्बा' शब्द विश्व की सुख-शान्ति का सार है

ब्र० कु० अमर चन्द गौतम

मन्थन करो विचार है, ब्रह्मा तन आधार है!
'आबू अब्बा' शब्द विश्व की 'सुख-शान्ति' का सार है!!
कल्प बाद ही आया हूं मैं, गीता-ज्ञान सुनाने को!
अपने मीठे बच्चों का, फिर से बैकुण्ठ बसाने को!!
यह दुनिया तो बीमार है—आबू अब्बा···

गफ़लत नहीं करो तुम बच्चे, माया मार भगानी है!
खाद पड़ गयी जो द्वापर से, संगम युगे जलानी है!!
छोड़ दो काम, विकार है—आबू अब्बा···

ब्रह्मा मेरा लवली बच्चा, तुम भी मीठे बच्चे हो!
राज्य तुम्हारा ही होगा, अगर सब निश्चय के पक्के हो!!
तुम्हें पूर्ण अधिकार है—आबू अब्बा···

ब्रह्मा ही सच्चा अर्जुन है, ज्ञानार्जन शुभ कर्म किया!
यही भाग्यशाली रथ भी है, जिसे मैंने स्वीकार किया!!
बना मेरा श्रृंगार है—आबू अब्बा···

सच्चे ब्राह्मण सुनें सभी, तुम ही संगम पर पाण्डव हो!
विश्वामित्र, तुम्हीं हो लक्ष्मण, शिव बाबा के ताण्डव हो!!
माया अब लाचार है—आबू अब्बा···

सोते रहे अभी भी बच्चे, तो पीछे पछताओगे!
वेट रख लिया सिर पर भारी, कैसे रेस लगाओगे?
छोड़ो यह, विस्तार है—आबू अब्बा···

याद करो नित अमृत वेले, अब राजाई पानी है!
अपने ही शुभ संकल्पों से, धरती स्वर्ग बनानी है!!
सुस्ती छठा विकार है—आबू अब्बा ··

मामेकं बस याद करो तुम, पर-चिन्तन की बात नहीं!
वरसा इस विधि पा जाओगे, संशय की दरकार नहीं!!
सतयुग फिर साकार है—आबू अब्बा ··

फालो फादर करते रहना, माया से बच जाओगे!
निराकार बन प्रैक्टिस करना, स्वीट होम आ जाओगे!!
शान्ति धाम, निराकार है—आबू अब्बा··

आओ बच्चो! मीठे बच्चो! तुम्हें शीघ्र ही चलना है!
गुण दैवी सब धारण कर लो, जो संगम का गहना है!!
अच्छा! सुसमाचार है—आबू अब्बा···

—:०:—

"रुहानी नशा"

—ब्र० कु० आशा, मालवीय नगर, नई दिल्ली

रुहानी नशा क्या है

रूह का सुप्रीम रूह (परमात्मा) से कनेक्शन (जोड़) करना ही रुहानी नशा है। रुहानी नशा अर्थात् आत्मिक नशा। वह नशा, जिससे देह की सुध-बुध से परे हो जाये व अशरीरी बन जाये, वह रुहानी नशा कहलाता है।

रुहानी नशे में रहने की विधि

रुहानी नशे में रहने का मुख्य आधार बाबा के महावाक्य हैं। वह महावाक्य जो हम ब्राह्मणों का (News Paper) है। योगियों की औषधि है व उड़ती कला का साधन है, वे महावाक्य जो हम प्रतिदिन वाणियों द्वारा सुनते हैं, अगर हम विधि पूर्वक सुनें, अर्थात् भगवान हमें सुना रहा है और हम बच्चे सुन रहे हैं—ऐसा समझकर सुनें, उनको जीवन में धारण करने की दृढ़ प्रतिज्ञा उसी सेकण्ड करें, और सच-मुच जीवन में व प्रैक्टिकल कर्मों में ले आयें, तो ऐसे याद में रह कर्म करने से जो नशा चढ़ेगा, वह रुहानी नशा कहलायेगा। जैसा कि बाबा के महावाक्यों में ही आता है—कि बच्चे याद रखो—तुम कौन हो, तुम खुदाई खिदमतगार हो, महावीर, शूरवीर, विजयी रत्न हो। अनेकानेक टाईटल्स जो बाबा हमें देते हैं, अगर उन सबको इकट्ठा करने लगें, तो काफी मोटी किताब तैयार हो जाये, अगर उन सभी को याद रखें, तो रुहानी नशा सहज ही चढ़ा रह सकता है।

रुहानी नशे में रहने से लाभ

रुहानी नशा एक न्यारी और प्यारी अवस्था का अनुभव कराता है। जिस प्रकार एक शराबी शराब के नशे में रहने से अपनी ही विस्मृति में होता है, उसे यह भी ध्यान नहीं रहता कि वह कहां पर बैठा है, क्या बोल रहा है, वह अपने आप में ही बहुत बड़ा अर्थात् सम्पन्न समझने लगता है, सोचता है जो मैं हूं, वैसा कोई और नहीं। परन्तु ऐसा नशा अल्पकाल के लिये चिन्ताओं से मुक्त करेगा, सदा-काल के लिये नहीं। इस नशे के उतर जाने के बाद अधिकाधिक चिन्तायें उसे चारों ओर से घेर लेती हैं। उसे परेशान कर देती हैं, मजबूर बना देती हैं।

इसलिये बाबा कहते—उन सब नशों को छोड़ अब रुहानी नशे में आ जाओ। रुहानी नशे में रहने वाला व्यक्ति एक तो अपनी देह की विस्मृति में होता है अर्थात् देह भान से परे होता है। वह देह, देह की वस्तुओं, वैभवों के आर्कषण से परे होता है। उसे दूसरे व्यक्ति की कमी, कमज़ोरी व अवगुण दिखाई नहीं पड़ते, वह सदा गुणग्राही होता है। वह सदा सर्व के आदि और अनादि रूप को ही देखता है। उसे ऐसा महसूस होता है कि बस मैं ही सबसे अधिक खुशनसीब हूं, मेरे जैसा खुशनसीब कोई नहीं। क्योंकि जिसको पाने के लिये मनुष्यात्मायें अभी तक पुकार रही हैं, उसके दर्शन के प्यासे हैं, उसके लिये अनेक हठ क्रियाएं कर रहे हैं, अनेक प्रकार का त्याग कर रहे हैं, वह पिता मेरा पिता है, मुझे मिल गया है। मैंने पा लिया है, बस मुझे तो बहुत बड़ी लाटरी मिल गई है, मेरे तो भाग्य का सितारा जग गया है, वाह मैं! वह एक मौलाई मस्ती में रहता है। उसे अपना भविष्य भी स्पष्ट होने के कारण अधिक नशा रहता है! रुहानी नशे में रहने से रूह को राहत मिल जाती है। आत्मा आनन्दित प्रफुल्लित हो उठती है और खुशी में गीत गाने लगती है—जो पाना था सो पा लिया, अब कुछ पाना नाहीं! रुहानी नशे में रहने से निशाना स्पष्ट होता है। जब निशाना व लक्ष्य स्पष्ट है, तो पुरुषार्थ तीव्रता से आगे बढ़ता चला जाता है। फिर विघ्न भी विघ्न महसूस नहीं होता, परन्तु रुहानी नशे में रहने वाला

विघ्न विनाशक बन जाता है। वह स्वयं भी सन्तुष्ट रहता है और सर्व को भी सदा सन्तुष्ट रख सकता है। सन्तुष्ट रहने वाला हर जगह, हर परिस्थिति में अपने को ठीक रख सकता है।

इसके अतिरिक्त वह अपने रुहानी नशे में रहने के कारण स्वतः ही सेवा का केन्द्र बन जाता है। उसका चेहरा रुहानियत के कारण चैतन्य संग्रहालय बन जाता है। वह चलता-फिरता लाइट हाउस बन जाता है, जो अनेक भटकती हुई आत्माओं को अपने सही मार्ग की दर्शना देता है। उसके कर्मों से ऐसी दिव्यता झलकती है कि उसके कर्मों को देख दूसरा सहज ही कर्मयोगी बन जाता है। इतने सब लाभ हैं रुहानी नशे में रहने से, तो क्यों न हम सदा रुहानी नशे में रह बाबा की आशा को पूर्ण कर दिखायें।

रुहानी नशे में न रहने से हानि

इसके विपरीत रुहानी नशे में न रहने से दैहिक नशा उत्पन्न हो जाता है। जिस प्रकार मन में कोई न कोई संकल्प अवश्य ही आते हैं, चाहे हम समर्थ संकल्प करें, चाहे व्यर्थ। ऐसे ही नशा तो रहेगा, अगर हम रुहानी नशे में नहीं रहेंगे, तो अवश्य ही देह का नशा आ जायेगा। देह का नशा अर्थात् अहम् अहंकार। जहां अहंकार आया वहां, Disregard भी आ जाता है, अर्थात् बेपरवाही आ जाती है, जो अलबेला बना देती है। जानकी दादी के शब्दों में—आलस्य व अलबेलापन तुम्हारी सौतेली मां है, जो तुम्हारे नसीब को फोड़ डालेगी, अर्थात् हम खुद ही देह के नशे में आकर अपने पांव पर कुल्हाड़ी मारने लगते हैं। अहंकार ही तो अलबेलेपन व आलस्य की जननी है। इससे हम अपनी तकदीर को बिगाड़ देते हैं, जबकि भाग्यविधाता ने हमारी तकदीर जगा दी। तकदीर की रेखा स्पष्ट और लम्बी खींच दी, परन्तु रुहानी नशे में न रहने के कारण अपनी तकदीर को स्वयं ही लकीर लगा बैठते हैं। फिर ऐसा अनुभव होगा, जैसे मेरे पास कुछ है ही नहीं, बिल्कुल कंगाल, खाली हो गए हैं। जब ज्ञान रत्नों से कंगाल बन जाते, तो कमज़ोर निर्बल बन जाते हैं। फिर कोई छोटी-सी भी परिस्थिति हमारे आगे आती है, वह हमें पहाड़ के समान लगने लगती है। जिसका सामना करना हमारी सामर्थ से बाहर हो जाता है। नैनों की रुहानियत समाप्त हो, अश्रुधारा बहने लगती है। बाह्य दुनिया आकर्षित करने लगती है। हरेक के अवगुण ही नज़र आने लगते हैं। अर्थात् वे एक प्रकार का कूड़ादान बन जाते हैं, जो हरेक की गन्दगी अपने अन्दर एकत्रित करने लगते हैं। गन्दगी भर जाने के कारण चारों ओर खुशबू की बजाय बदबू, सर्विस की बजाय, डिसर्विस शुरू कर देते हैं।

इसलिए बाबा कहते हैं—बच्चे सदा सदा के लिए रुहानी नशे में आ जाओ। सदा चढ़ती कला व उड़ती कला का अनुभव करो। संगमयुग है ही पुरुषोत्तम बनने का युग, आगे बढ़ने का युग। हमें बाप के कदम के साथ कदम मिलाते आगे बढ़ते जाना है। जैसे बाप अव्यक्त वतन वासी बन गए, यहां से उड़ गये, अब हमें भी बाप समान बनना है। तब ही हम उड़ते पंछी, व फरिश्ते बन सकेंगे, जो एक जगह बैठे भी अनेक आत्माओं की सेवा कर सकेंगे।

—०—

★ "टकराव" ★

ब्र० कु० राजेन्द्र कुमार, उज्जैन

"टकराव" जी हां टकराव । मुझे डर है कि कहीं शीर्षक पढ़कर आपके अन्दर टकराव पैदा नहीं हो जाये ? लेकिन कृपया बहुत ही सावधान और सतर्क रहिये । क्योंकि "टकराव" एक बहुत ही भयंकर बीमारी का नाम है । और यह बीमारी कभी-कभी बहुत ही खतरनाक साबित होती है, जो अच्छे-अच्छे समझदार, ज्ञानी और बुद्धिमान व्यक्तियों में भी पैदा होकर उनका सत्यानाश कर देती है । जहां पर "टकराव" पैदा होता है, वहां पर आप किसी भी प्रकार की उन्नति की कल्पना नहीं कर सकते ।

आप नज़र उठाकर अपने चारों ओर देखिए तो सही, आपको टकराव ही टकराव नज़र आयेगा। एक देश का दूसरे देश से, एक धर्म का दूसरे धर्म से, जनता का शासन से, छात्रों का शिक्षकों से आदि-आदि । कहने का तात्पर्य यह है कि हर जगह 'टकराव' मौजूद है। समाज का कोई वर्ग ऐसा अछूता नहीं है, जहां पर कि "टकराव" न हो अर्थात् 'टकराव' एक सर्वव्यापी वस्तु है । इन सब 'टकराव' से अलग एक मुख्य टकराव है हमारे 'स्वभाव-संस्कारों' में टकराव ।

टकराव भी मुख्य रूप से दो प्रकार का होता है । पहला है गुप्त टकराव और दूसरा है प्रत्यक्ष टकराव । गुप्त टकराव के अन्तर्गत भी दो प्रकार के टकराव हैं—१. आन्तरिक टकराव अर्थात् हमारे अन्दर स्वभाव-संस्कारों में टकराव और दूसरा है दूसरों के स्वभाव-संस्कारों से टकराव । हमारे स्वभाव-संस्कारों में टकराव के कारण ही हम ज्ञान मार्ग में वह उन्नति नहीं कर पाते हैं, जो हम करना चाहते हैं या जो हमें करनी चाहिये । जब हम अपने पुराने आसुरी या विकारी स्वभाव-संस्कारों को समाप्त कर नये दैवी स्वभाव-संस्कार धारण करने लगते हैं, तो आपस में टकराव पैदा होता है । यह टकराव है हमारे स्वयं के स्वभाव-संस्कारों में "गुप्त टकराव" । यही गुप्त टकराव कभी-कभी दूसरों के स्वभाव-संस्कारों से भी होता है । अर्थात् यदि हमारे स्वभाव-संस्कार दूसरों के स्वभाव-संस्कारों से मेल नहीं खाते हैं, या अन्य आत्माओं के स्वभाव-संस्कार हमारे स्वभाव संस्काररों से मेलन हीं खाते हैं, तो इसके पश्चात् जो स्थिति उत्पन्न होती है, वह है 'टकराव।' यह है गुप्त टकराव ।

इसके अलावा एक है—"प्रत्यक्ष टकराव" । अर्थात् एक स्थिति तो यह होती है कि हम दूसरों के स्वभाव-संस्कारों से आन्तरिक रूप से टकराने की कोशिश करते हैं, इस प्रकार कि सामने वाले को पता नहीं चले और दूसरी स्थिति यह होती है कि हम प्रकट रूप में टकराने लगते हैं, इस स्थिति को ही 'प्रत्यक्ष टकराव' कहेंगे । 'टकराव' चाहे गुप्त हो या प्रत्यक्ष, दोनों ही बहुत हानिकारक हैं ।

यह टकराव ज्ञानी अर्थात् ब्राह्मण कुल भूषण और अज्ञानी, सभी आत्माओं में देखने को मिलता है । लेकिन जब ब्राह्मण कुल की आत्माओं में ही टकराव होता है, तो उसका प्रभाव अन्य आत्माओं पर (जो संस्था में आस्था रखती हैं) बुरा पड़ता है ।

अन्य आत्माओं से टकराव के कारण

१. 'टकराव' का सबसे मुख्य कारण अपने आप में 'अहम्' की भावना का होना है । हम अपने आपको दूसरों से ज्यादा ऊंचा या ज्ञानी सिद्ध करना चाहते हैं या यह चाहते हैं कि हमें दूसरों से ज्यादा 'मान-शान' मिले । इस प्रकार 'अहम्' और 'मान-शान'

को आन्तरिक वृत्ति ही आपस में टकराव पैदा करती है।

२. टकराव का दूसरा कारण 'ईर्ष्या' की भावना है। हम दूसरों की उन्नति या पुरुषार्थ को देखकर उसे सहन नहीं कर पाते हैं। और हमारे अन्दर ईर्ष्या की भावना पैदा होती है, यही ईर्ष्या की भावना आपस में टकराव पैदा करती है। यह ईर्ष्या की भावना केवल मात्र उन्नति या पुरुषार्थ से ही सम्बन्ध नहीं रखती है, अपितु हमारा व्यवहार, हमारी चलन, हमारे कर्म और हमारे गुण भी कभी-कभी दूसरों में ईर्ष्या की भावना जगा देते हैं।

३. जब यदि हम किसी प्रकार का सुझाव या अपनी कोई बात रखते हैं, और यदि उसे स्वीकार नहीं किया जाता है या उसे महत्त्व नहीं दिया जाता है, तो आपस में 'टकराव' पैदा हो जाता है।

४. टकराव का चौथा कारण गलतफहमी या अनुमान की बीमारी है। किसी के भी बारे में हम गलतफहमी का शिकार होकर या गलत अनुमान लगा लेते हैं, और जब यही गलतफहमी या गलत अनुमान हमारी वृत्ति में घर कर जाते हैं, तो आपस में 'टकराव' हो जाता है।

५. इन सबके अतिरिक्त 'टकराव' का एक प्रमुख कारण 'ज्ञान की अल्पज्ञता' है। अर्थात् हमारा जो ज्ञान है, उसको हमने पूरी तरह समझा नहीं है और यदि पूरी तरह समझा ही नहीं है, तो उसे पूरी तरह धारण करने का सवाल ही पैदा नहीं होता है। यदि हमने ज्ञान की गहराई को समझा है, तो हमारे आपस में कभी भी टकराव की स्थिति उत्पन्न नहीं हो सकती है।

इस प्रकार उपरोक्त कुछ महत्त्वपूर्ण कारण हैं, जिनसे कि हमारे बीच 'टकराव' पैदा होता है।

निवारण

सबसे पहले तो हमें यह सोचना चाहिए कि यह टकराव कोई अच्छी बात नहीं है। टकराव से हम अपना स्वयं का और दूसरों का भी नुकसान कर देते हैं। यदि हमारे बीच टकराव है, तो वह दूसरों में हमारा प्रभाव (इम्प्रेशन Impression) ही कम (डाउन Down) करता है। और हमारी आध्यात्मिक उन्नति में बाधा पहुंचाता है। यदि हम किसी भी भावना के वशीभूत होकर 'टकराव' की स्थिति उत्पन्न करते हैं, तो यह हमारी ज्ञान की प्रकृति (नेचर Nature) के विरुद्ध है।

यह टकराव कभी ज्ञानी-ज्ञानी और कभी-कभी अज्ञानी-ज्ञानी में भी दृष्टिगोचर होता है। दोनों ही स्थिति में यह बहुत खतरनाक बात है। जहां तक हो सके हमें 'टकराव' से बचकर ही रहना चाहिये और कम से कम हम ब्राह्मण कुल में तो टकराव होना ही नहीं चाहिये, क्योंकि हमारा लक्ष्य है 'एक मत' स्थापन करना और हम दूसरों को भी आपस में एकता से रहने की प्रेरणा देते हैं। यदि हमारे अन्दर ही टकराव होगा तो हमारा लक्ष्य कैसे पूरा होगा ?

टकराव के समस्त कारणों की जड़ में सहनशक्ति और समाने की शक्ति की कमी है। इसलिए टकराव को समाप्त करने के लिए हमें अपने अन्दर जितना हो सके सहन शक्ति और समाने की शक्ति का विकास करना चाहिए। यदि हमारे अन्दर ये शक्तियां होंगी, तो हम बहुत हद तक टकराव से बच सकेंगे।

'टकराव' हमारी शक्ति को क्षीण करता है, समय को व्यर्थ करता है, और नतीजा कुछ नहीं निकलता है। अतः हमें यही कोशिश करनी चाहिए कि 'टकराव' की स्थिति उत्पन्न ही न होने पाये, क्योंकि यह हमारी उन्नति में एक बाधक तत्व है।

—०—

"समस्यायें एवं निराकरण"

ब्र० कु० प्रभा, देवास

आज विश्व एक भयंकर तनावपूर्ण स्थिति से गुजर रहा है। आज सारे समाज के सामने अनेकानेक समस्यायें हैं, और उन सभी समस्याओं का मूल कारण है मनुष्य के मन में तनाव या उसके व्यवहार में भावावेश। मनुष्य का वर्तमान जीवन समस्याओं से भरा पड़ा है। विश्व शांति की समस्या, जनसंख्या में वृद्धि की समस्या, रोजगार समस्या, भ्रष्टाचार उन्मूलन समस्या, विद्यार्थी समस्या, आदि-आदि समस्यायें बहुत ही उग्र रूप धारण करती जा रही हैं। वर्तमान समस्याओं के बीच घिरा हुआ मनुष्य निरुद्देश्य मृगतृष्णा की भांति भटक रहा है। मानव आज ऐसे चौराहे पर खड़ा है, जहां उसे पता ही नहीं चल रहा है, कि उसे किधर जाना है।

प्रश्न उठता है कि समस्याओं का मूल कारण क्या है? वास्तव में विश्व की समस्याओं का मूल कारण स्वयं मनुष्य ही है, क्योंकि स्वयं को न जानने के कारण देह अभिमान की उत्पत्ति होती है। देह अभिमान से ही व्यक्ति के अन्दर पांच मनोविकार, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आते हैं और इन्हीं विचारों के चंगुल में फंसा होने के कारण उसका विवेक कुंठित हो चुका है और अज्ञान के अंधकार में ठोकरें खाता हुआ मनुष्य अपने ही द्वारा पैदा की समस्याओं के जाल में छटपटा रहा है।

वास्तव में वर्तमान ही समस्याओं की भूल-भुलैया की तरह है। जो मनुष्य आत्मा एक बार समस्याओं के जाल में फंस जाती है, फिर उसका स्वतः ही इस समस्याओं के जाल से बाहर निकलना असंभव है। विश्व के अन्दर जितने भी बड़े-बड़े धर्म-पिता, राजनीतिज्ञ, महात्मा आये उन्होंने अपनी-अपनी बुद्धि और समझ के द्वारा समस्याओं का हल तो सुझाया, लेकिन फिर भी यह सारी समस्याएं सुलझने के बजाय बढ़ती ही गईं। वास्तव में जब समस्याओं का पूर्ण हल देहधारी मनुष्य आत्माओं के पास नहीं होता है तब परमात्मा ही उन्हें सुलझाते हैं।

अब आप थोड़ा विचार करें कि समस्या-समाधान गीता ज्ञान द्वारा ही कैसे हो सकता है। आज संसार में ज्ञान तो बहुत है, वे सब हमें अपनी-अपनी जगह ले जाते हैं। उनसे हमें ज्ञान तो मिलता है लेकिन फिर भी परिस्थिति तो वहीं की वहीं हमारे सामने बनी रहती है। ज्ञान प्राप्त करने से विश्व की समस्या का समाधान नहीं हो सकता। जैसे हम देखते हैं कि आज विश्व में गति के साधन तो अनेक हैं, ट्रेन, बस, हवाई जहाज आदि। परन्तु रेल व बस द्वारा हम धरती पर ही चक्कर लगा सकते हैं। अगर हम ट्रेन या बस द्वारा ऊपर जाना चाहें तो नहीं जा सकते। उसके लिए तो हमें वायुयान की ही आवश्यकता पड़ेगी। ठीक उसी प्रकार स्वयं परमात्मा द्वारा दिये जाने वाले गीता ज्ञान द्वारा ही मानव अपनी समस्याओं का समाधान कर सकता है। सर्वशास्त्र शिरोमणी भगवद्गीता ही है जिसमें स्वयं परमात्मा का कथन है कि "मैं अधर्म का नाश करने और एक सत्य धर्म की स्थापना अर्थ इस सृष्टि पर आता हूं।" गीता ही हमारे यहां का सर्वमान्य ग्रंथ है। विश्व की सर्वश्रेष्ठ काव्यकृति है। गीता का अर्थ ही है, परमपिता परमात्मा जो कि सबके गति-सद्गति-दाता हैं, मुक्ति-जीवन-मुक्ति-दाता है, उनके महावाक्यों का संकलन। इसका संबंध किसी

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

आध्यात्मिक सेवा समाचार

फिरोजपुर कैंट सेवा केन्द्र की ओर से डी० सी० माडल स्कूल, रेलवे रोड के सामने अष्ट दिवसीय 'चरित्र निर्माण आध्यात्मिक मेले' का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन ७-४-८२ को सायं ७ बजे डिविजनल कमिश्नर भ्राता एन० के० अरोड़ा जी के द्वारा सम्पन्न हुआ। दादी मनोहर इन्द्रा जी ने 'शिव ध्वज' फहराया। इसी दिन उद्घाटन से पूर्व नगर के मुख्य बाजारों से शान्ति यात्रा भी निकाली गई, जिसमें हिमाचल प्रदेश, पंजाब तथा हरियाणा के बहुत से भाई बहनों ने भाग लिया। ८-४-८२ को विशिष्ट व्यक्तियों का स्नेह मिलन रखा गया, जिसमें ४० गणमान्य व्यक्तियों के सन्मुख दादी मनोहर इन्द्रा जी ने अपने अनुभव प्रस्तुत किए। इसके साथ-२ योग शिविर का भी आयोजन किया गया। प्रतिदिन मेले को हजारों लोगों ने देखा, जिनमें हर व्यवसाय के लोग शामिल हैं जैसे कि मिलट्री के अधिकारी वकील, डाक्टर, व्यापारी, धार्मिक संस्थाओं के प्रधान, स्कूल-कालेजों के प्रिंसिपल, अनाथालय के प्रधान, रेलवे अधिकारी आदि-२। १४-४-८२ को मेले का समापन समारोह मनाया गया।

रायपुर सेवा केन्द्र की ओर से २१-३-८२ से ३१-३-८२ तक महात्मा गांधी मार्ग पर स्थित मैदान में "विश्व नव-निर्माण अध्यात्मिक मेले" का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन दादी प्रकाशमणि जी द्वारा सम्पन्न हुआ। २१-३-८२ को प्रातः शहर में से शोभा यात्रा निकाली गई, जिसमें लगभग ७०० भाई-बहनों ने भाग लिया। मेले के सम्मेलन के मुख्य अतिथि मध्यप्रदेश के कृषि राज्य मंत्री भ्राता बी० आर० यादव थे। मेले से पहले दिन पत्रकार-सम्मेलन रखा गया, जिन्होंने मेले का समाचार अपने-२ समाचार पत्रों में प्रकाशित किया। मेले के साथ-२ राजयोग शिविरों का भी आयोजन किया गया। मेले से लगभग १० हजार लोगों ने और राजयोग शिविरों से ६०० लोगों ने लाभ प्राप्त किया।

कटक सेवाकेन्द्र से ब्र०कु० कमलेश लिखती हैं कि मार्च तथा अप्रैल मास में 'रोटरी क्लब' इंजिनियरिंग कालेज, 'ममता स्टोरी स्टेहोम' नामक आश्रम पर, डी० एन० हाई०स्कूल, माइनिंग इंजिनियरिंग स्कूल, डिस्ट्रिक्ट जेल तथा जगन्नाथ टेम्पल आदि स्थानों पर अध्यात्मिक प्रवचन तथा प्रोजैक्टर शो के कार्यक्रम आयोजित किए गए, जिनके द्वारा अध्यापकों, विद्यार्थियों, अनाथ बहिनों कैदियों, विशिष्ट व्यक्तियों तथा भक्त आत्माओं को ईश्वरीय संदेश दिया गया। इसके अतिरिक्त जिला केंवझर नगरी में सात दिन के लिए 'चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी' तथा राजयोग शिविर का आयोजन किया गया। प्रदर्शनी से लगभग १०,००० आत्माओं ने और ज्ञान-योग शिविरों से लगभग १०० आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया। यहां पर गीता पाठशाला खुल गई है, जिसमें ३०-४० भाई बहिनें प्रतिदिन कलास करते हैं।

कालेज स्कवयर(कटक)सेवा केन्द्र की ओर से ८ दिन के लिए बड़बिल में 'विश्व नव-निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी, एवं राजयोग शिविर का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन वहां के मटिस्ट्रेट महोदय ने किया। समाप्ति समारोह भ्राता वीरेन्द्र कुमार अग्रवाल जी के द्वारा सम्पन्न हुआ,

जयपुर सेवा केन्द्र से निर्मला बहिन लिखती हैं कि 'राजस्थान श्रमिक शिक्षा केन्द्र' में २३-३-८२ से २५-३-८२ तक "औद्योगिक शान्ति नए क्षितिज की खोज" गोष्ठी का आयोजन शिक्षाधिकारी महावीर प्रसाद शर्मा की देखरेख में किया गया। इसमें राजस्थान राज्य विद्युत मंडल के कर्मचारियों ने भाग लिया

मणिनगर (अहमदाबाद) सेवा केन्द्र की ओर से बापूनगर में दो दिवसीय आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। शांति यात्रा तथा फंकशन का भी कार्यक्रम रखा गया साथ-२ प्रोजैक्टर शो भी दिखाया गया। प्रदर्शनी से लगभग २००० आत्माओं को शिव पिता का संदेश मिला। इसके अतिरिक्त कलोल उपसेवा केन्द्र की ओर से धमासणा गांव तथा धानज गांव में भी आध्यात्मिक प्रदर्शनी से हजारों आत्माओं को शिव संदेश दिया गया।

हैदराबाद सेवा केन्द्र की ओर से सिद्धितेठ तालुका में ७.३.८२ से १४.३.८२ तक आध्यात्मिक प्रदर्शनी तथा योगशिविर का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन स्थानीय राजस्व अधिकारी भ्राता के० पुला रेड्डी जी ने किया। इसके अतिरिक्त करीमनगर में भी ४ दिन के लिए आध्यात्मिक प्रदर्शनी एवं योगशिविर का आयोजन किया गया। गुजराती महिला मंडल में साप्ताहिक पाठ्यक्रम कराया गया।

तिनसुकिया सेवा केन्द्र की ओर से 'नाजिरा' में दो दिवसीय आध्यात्मिक प्रदर्शनी तथा प्रोजैक्टर शो का कार्यक्रम आयोजित किया गया,। इसके अतिरिक्त डिमऊ, शिवसागर, लापन्दा क्लब, आमगुड़ी, माकूम आदि स्थानों पर भी प्रदर्शनी, प्रोजैक्टर तथा प्रवचनों के कार्यक्रम रखे गए।,

पोरबन्दर सेवा केन्द्र की ओर से गत दो मास में ए० सी० सी० सीमेंट फैक्ट्री क्लब, महाराना टैक्सटाइल मील क्लब, बिरला सोडा एश फैक्ट्री, रोटरी क्लब हमेन्द्र भुवन एवं रेलवे स्टेशन आदि स्थानों पर प्रवचनों के कार्यक्रम रखे गए। इसके अतिरिक्त होली के अवसर पर बोरबीरा नामक गाँव की प्राथमिक पाठशाला में दो दिवसोय 'विश्व नव निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का आयोजन किया गया।

बड़ौदा सेवाकेन्द्र ब्र० कु० राज तथा ब्र०कु० निरंजना लिखती हैं कि बड़ौदा जिले के ओस्लाम गांव में एक दिन के लिए 'विश्व नव-निर्माण प्रदर्शनी' तथा प्रवचन का कार्यक्रम रखा गया, जिससे करीब १,००० आत्माओं ने लाभ उठाया।

ऊना सेवा केन्द्र से ब्र० कु० किरन लिखती हैं कि गांव-२ में ईश्वरीय संदेश पहुंचाने हेतु रक्कड़ कालौनी, डोली, चिताड़ा में प्रदर्शनी लगाई गई, जिससे हजारों लोगों ने लाभ उठाया। सेवा केन्द्र पर एक दिन नगर के विशिष्ट व्यक्तियों का स्नेह मिलन भी रखा गया, जिसमें उपस्थित लोग विश्व-विद्यालय के परिचय तथा इस द्वारा देश-विदेश में की जा रही सेवा का समाचार सुनकर बहुत प्रभावित हुए।

पुरी सेवा केन्द्र को नरसिंहपुर में 'गायत्री यज्ञ' की ओर से मिले निमंत्रण मिलने पर ब्र० कु० निरुपमा ने वहां पर गीता ज्ञान तथा होली के महत्त्व पर प्रवचन किया तथा प्रोजैक्टर शो का भी आयोजन किया गया। जुग-ज्योति संस्था द्वारा आयोजित एक अन्य यज्ञ के अवसर पर निमंत्रण मिलने पर हरिपुर नामक स्थान पर ६०० आत्माओं को भी ब्र०कु० निरुपमा ने शिव संदेश दिया।

पाटन सेवा केन्द्र की ओर से गतमास में विशिष्ट व्यक्तियों का स्नेह मिलन रखा गया जिसमें मुख्य अतिथि मेहसाना जिला शिक्षा अधिकारी भ्राता मुकुन्द भाई जोशी जी थे। सभी उपस्थित व्यक्तियों ने अपने-२ विचार प्रकट किए विदेश से आई हुई ब्र० कु० पेट्रा (जर्मनी), ब्र० कु० जोय (लास एंजिल्स), ब्र० कु० जैफ (आस्ट्रेलिया) ने अपने दिव्य आलौकिक नृत्य संगीत से ईश्वरीय संदेश दिया।

भावनगर सेवा केन्द्र की ओर से सर तख्तसिंह हॉस्पीटल में नर्स बहनों के लिए "शारीरिक सेवा के साथ-२ आध्यात्मिक सेवा" विषय पर प्रवचन किया गया। इसके अतिरिक्त बड़ा गांव में तथा सावर कुण्डला में भी प्रवचन तथा प्रोजैक्टर शो द्वारा अनेकानेक आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया।

बेरावल उप सेवा केन्द्र की ओर से दीव शहर में

त्रिदिवसीय आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन दीव के कलैक्टर भ्राता भूपत भाई मोरासिया ने किया। राजयोग के अतिरिक्त दीव शहर के स्कूलों, महिला समाज तथा पाटन शहर के बालाजी मंदिर में आध्यात्मिक प्रवचनों के कार्यक्रम रखे गए।

सिरसी सेवा केन्द्र से ब्र० कु० गायत्री लिखती हैं नवरात्रों के दिनों में ३-३-८२ से १३-३-८२ तक आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाई गई। जिससे ३०.००० हजार आत्माओं ने लाभ उठाया।

बलसाड़ सेवा केन्द्र की ओर से 'इन्द्रो-एग्रो-८२ नामक औद्योगिक मेले में तीन स्टाल लगाए गए जिनमें 'उद्योग में योग प्रदर्शनी' लगाई गई, जिसका उद्घाटन जिलाधीश मृदुला बहिन वशी ने किया। प्रदर्शनी से हजारों आत्माओं ने लाभ लिया। इसके अतिरिक्त बीली मोरा में 'गायकवाड़ कॉटन मिल' में दो दिवसीय 'उद्योग में योग प्रदर्शनी' रखी गई जिससे वहां के ३००० हजार कर्मचारी लाभान्वित हुए।

मद्रास सेवाकेन्द्र की ओर से न्यायविदों का स्नेह मिलन रखा गया, जिसके अध्यक्ष भ्राता वी० आर कृष्ण अययर थे। इसमें हाईकोर्ट तथा निम्न कोर्ट के न्यायाधीशों ने भाग लिया तथा सभी ने योग शिविर करने की इच्छा प्रकट की। इसके अतिरिक्त हर सप्ताह में तीन दिन मंदिरों में प्रदर्शनी की जाती है जिससे अभी तक ३२ मंदिरों में सर्विस हो चुकी है।

मिरजापुर सेवाकेन्द्र की ओर से विन्ध्याचल क्षेत्र में विन्ध्यावासिनी देवी के मेले में २६-३-८२ से ३-४-८२ तक 'ज्ञान-योग पथ प्रदर्शनी एवं राजयोग शिविर का आयोजन किया गया। प्रोजैक्टर शो भी दिखाया गया। मेले में आए हुए लाखों भक्तों ने प्रदर्शनी को देखकर ईश्वरीय संदेश प्राप्त किया।

भंडारा सेवा केन्द्र से ब्र०कु० शकुन्तला लिखती हैं कि मार्च मास में कैसल वाड़ा, खड़क अर्जुनी तथा डोंगर गांवों में विश्व नव निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी' तथा प्रवचनों द्वारा हमारे लोगों को ईश्वरीय संदेश दिया गया। अड़याल गांव में ३-४-८२ से ५-४-८२ तक विश्व नवनिर्माण प्रदर्शनी लगाई गई। इस गांव में बाला जी को लकड़ी के घोड़े पर बिठाकर रथ में रख कर बजरंग-बली के मंदिर तक यात्रा कराते हैं। यह मेला एक सप्ताह चलता है। इस अवसर पर आए हुए १५,००० भाई—बहिनों ने प्रदर्शनी से लाभ उठाया।

झांसी सेवाकेन्द्र की ओर से ब्र० कु० शीला लिखती हैं कि दुर्गा मेले के अवसर पर 'चरित्र निर्माण अध्यात्मिक प्रदर्शनी का' आयोजन किया गया, जिसमें दुर्गा की चेतन झांकी सजाई गई। प्रदर्शनी से हजारों भक्त आत्माओं ने शिव बाबा का संदेश प्राप्त किया।

नारायण गांव सेवाकेन्द्र की ओर से जानकी दादी के आगमन पर 'निर्माण भवन' में विशिष्ट व्यक्तियों का स्नेह मिलन रखा गया जिसमें लगभग ३०० आत्माएं सम्मिलित हुई तथा जानकी दादी के व्यक्तिगत अनुभवों को सुन कर बहुत प्रभावित हुई। सभी ने सप्ताह कोर्स करने की इच्छा प्रकट की। एक ग्रुप का सप्ताह कोर्स पूरा हो चुका है। नारायण गांव सेवा केन्द्र की ओर से जुम्ना शहर में भी त्रिदिवसीय राजयोग प्रदर्शनी से लगभग १,०००० आत्माओं ने तथा योग शिविर से २५० लोगों ने लाभ प्राप्त किया।

बैतूल सेवाकेन्द्र की ओर से बैतूल, तहसील मुलताई, जिला रायसेन तथा मक्सी, सीहरे आदि स्थानों पर प्रदर्शनी, प्रवचन, योग शिविरों द्वारा हजारों आत्माओं को शिवपिता का संदेश दिया गया।

महू सेवाकेन्द्र की ओर से ग्राम हैदरा तथा दौलता बाद में आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाई गई जिससे आस पास के गांवों के किसानों-मजदूरों तथा अन्य सभी वर्ग के लोगों ने परमपिता शिव का संदेश तथा परिचय प्राप्त किया।

नीमच सेवाकेन्द्र से ब्र०कु० ममता लिखती हैं कि गत मास में हर वार और जीरन नामक गांवों में

५-५ दिन की ईश्वरीय संदेश आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन नगर के एस० डी० ओ० भ्राता आर० रामानुजम ने किया

उज्जैन सेवाकेन्द्र से ब्र०कु० रुकमणी लिखती हैं कि मक्सीनगर में 'चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन रिटायर्ड मेजरभ्राता ओ० पी० श्री वास्तव जी ने किया। ग्राम झोंकर में भी प्रवचन तथा प्रदर्शनी रखी गई।

नरसिंह गढ़ सेवा केन्द्र से ब्र० कु० मीनाक्षी लिखती हैं कि नरसिंह गढ़ के पास श्यामपुर गांव में चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन ग्राम पंचायत भवन में किया गया। यहां पर गीता पाठशाला की स्थापना हो गई है।

गोरखपुर सेवा केन्द्र की ओर से पड़रौना में 'राजयोग आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का आयोजन किया गया जिससे ५०० आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया। इसके अतिरिक्त रानी सरिता देवी के दरबार महल में भी राजयोग प्रदर्शनी का प्रोजैक्टर शो दिखाया गया।

लातूर सेवा केन्द्र की ओर से एक मंदिर में प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिससे अनेकानेक आत्माओं को शिव बाबा का संदेश दिया गया।

पणजी सेवा केन्द्र से ब्र० कु० शोभा लिखती हैं राजपुर के एक मंदिर में 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी' तथा राजयोग शिविर का आयोजन किया गया। इसके अतिरिक्त राजापुर में ही ल० ना० के मंदिर तथा हनुमान के मंदिर में भी प्रोजैक्टर शो तथा प्रवचन के कार्यक्रम किए गए।

मोदीनगर सेवा केन्द्र की ओर से एक स्थानीय क्लब में तथा मंडी में सार्वजनिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिससे अनेक आत्माएं लाभान्वित हुई। विभिन्न स्कूलों में भी प्रवचनों के कार्यक्रम किए जा रहे हैं।

निशातगंज (लखनऊ) सेवा केन्द्र से ब्र० कु० सुमित्रा लिखती हैं कि ४-४-८२ को नो बस्ता गांव में प्रदर्शनी, प्रोजैक्टर शो तथा प्रवचन के कार्यक्रम आयोजित किए गए। इसके अतिरिक्त मित्तई उपसेवा केन्द्र की ओर से देवा में त्रिदिवसीय बाल प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया।

आनंद सेवाकेन्द्र से ब्र० कु० छुग्गी लिखती हैं कि वासंद गांव में त्रिदिवसीय विश्व शांति आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। देवियों की चैतन्य झांकी, राजयोग फिल्म तथा आध्यात्मिक नाटक आदि विविध कार्यक्रमों का भी आयोजन किया गया।

कोलार गोल्ड फील्ड सेवा केन्द्र की ओर से किंग जार्ज मैदान में ६-३-८२ से १३-३-८२ तक "राजयोग विश्व शान्ति मेला" का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन भ्राता पी० डी० गुप्ता बी० जी० एम० एल०, के० जी० एम० के मध्यम एवं प्रबंन्ध निर्देशक द्वारा सम्पन्न हुआ। उद्घाटन समारोह गीत, सामूहिक योग तथा अन्य मनोरंजन कार्यक्रमों सहित सम्पन्न हुआ। न्यायविदों, पुलिस अधिकारियों, व्यापारियां, महिलाओं, शिक्षा विदों तथा धर्म नेताओं के विभिन्न सम्मेलन भी आयोजित किए गए। इस मेले से लगभग ६,००० आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया। इसके अतिरित योगशिविरों से भी ६०-७० आत्माएं लाभान्वित हुई।

करनाल सेवाकेन्द्र की ओर से कैथल शहर में १०-४-८२ से १४-४-८२ तक अग्रवाल धर्मशाला में चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन भूतपूर्ण एम० एल० ए० भ्राता चरणदास जी द्वारा किया गया। शहर के बीच से प्रभातफेरी भी निकाली गई। इस प्रदर्शनी से हजारों आत्माओं ने शिवपिता का संदेश प्राप्त किया।

जगदीश चन्द्र हसीजा, सम्पादक, ब्र० कु० आत्म प्रकाश प्रकाशक, बी 9/19 कृष्ण नगर, दिल्ली ने चोपड़ा प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 से छपवाया, Regd. N०. 10563/65-D (DN) 178